MV_Jan_2017_Q7:Layout 1 12/14/2016 11:34 AM Page 3

वर्ष 3, अंक 9, जनवरी-2017
पौष, वि. सं. 2073, ₹ 50

मंगल विमर्श

त्रैमासिक

वादे वादे जायते तत्त्वबोधः

अंदर के पृष्ठों पर

6-13
जेहि जय होइ सो स्यंदन आना
डॉ. शीला कमल टावरी

14-21
युवाओं के प्रेरणापुंज स्वामी विवेकानंद
डॉ. बजरंग लाल गुप्ता

22-33
हिंदू-विद्वेष : निवेशन निहितार्थ एवं निदान
आनन्द आदीश

34-41
भारतीय भाषाओं की एकसूत्रता
डॉ. प्रमोद कुमार दुबे

42-47
भारतीय संस्कृति में पर्यावरण दर्शन
ओमप्रकाश दुबे

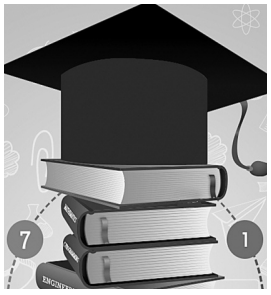

48-51
तकनीकी शिक्षा की चुनौतियाँ और संभावनाएँ
डॉ. विनय कुमार पाठक

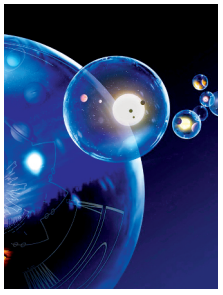

52-57
वैज्ञानिक मानसिकता और राष्ट्र
डॉ. ओम प्रभात अग्रवाल

58-62
जान का जंजाल मोटापा
डॉ. ज्योत्स्ना

मुख्य संरक्षक
डॉ. बजरंगलाल गुप्ता

प्रधान संपादक
ओमीश परुथी

संपादक
सुनील पांडेय

संयुक्त संपादक
डॉ. रवींद्र अग्रवाल

प्रबंध संपादक
आदर्श गुप्ता

प्रकाशक एवं मुद्रक आदर्श गुप्ता द्वारा मंगल सृष्टि, सी-84, अहिंसा विहार, सेक्टर-9, रोहिणी, दिल्ली- 110085 के लिए प्रकाशित एवं एक्सेल प्रिंट, सी-36, एफ एफ कॉम्प्लेक्स, झंडेवाला, नई दिल्ली द्वारा मुद्रित।

RNI
DELHIN/2015/59919
ISSN
2394-9929
ISBN
978-81-930883-7-1

फोन नं.
+91-9811166215
+91-11-27565018
ई-मेल
mangalvimarsh@gmail.com
वेब साइट
www.mangalvimarsh.in

मंगल विमर्श पत्रिका में व्यक्त विचारों के लिए रचनाकार स्वयं उत्तरदायी हैं। संपादक, मुद्रक व प्रकाशक का उनसे सहमत होना अनिवार्य नहीं है।

सभी विवादों का न्याय क्षेत्र केवल दिल्ली होगा।

MV_Jan_2017_Q7:Layout 1 12/14/2016 11:34 AM Page 4

MV_Jan_2017_Q7:Layout 1 12/14/2016 11:34 AM Page 5

अथ

जब-जब मानव धर्म-ध्वजा हाथ में लिए हुए भी दिग्भ्रमित हो जाता है, जब-जब धर्म का सत्त्व अनुष्ठानों की स्वर्ण मंजूषा में कैद कर दिया जाता है; तब-तब ऐसी महान् विभूतियाँ जन्म लेती हैं, जो मानवता के समक्ष धर्म का सच्चा स्वरूप प्रस्तुत कर उसे उपकृत करती हैं। स्वामी विवेकानंद ऐसी ही एक दिव्य विभूति थे, जिन्होंने एक ओर हिंदू धर्म का पुनरुत्थान किया तो दूसरी ओर सार्वजनीन धर्म का मार्ग भी प्रशस्त किया।

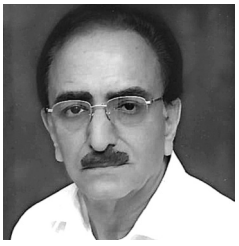

ओमीश परुथी
एसोसिएट प्रोफेसर (से.नि.)
प्रधान संपादक

विवेकानंद ज्ञान, भक्ति व कर्म की सुभग संगमस्थली थे। वे एक विलक्षण चिंतक, राष्ट्र व संस्कृति के उन्नायक व महान् मानव मित्र थे। उन्होंने अपने विचार वैभव व अद्भुत वक्तृत्व कला से विश्व को चमत्कृत कर दिया। 'शिकागो विश्व धर्म सम्मेलन' में उनकी दिव्य वाणी को सुनकर धुरंधर विदेशी विद्वान भी अभिभूत व अवाक् हो गए। भारतीय संस्कृति की देदीप्यमान चिंतनमणियों को जिस प्रकार उन्होंने प्रस्तुत किया, उनकी आँखें चुंधिया गईं। प्रमुख स्थानीय समाचार-पत्र उनकी प्रशस्तियों से भर गए। 'न्यूयॉर्क हेरल्ड' ने लिखा था-

'शिकागो धर्म महासभा में विवेकानंद ही सर्वश्रेष्ठ व्यक्ति हैं। उनका भाषण सुनकर ऐसा लगता है धर्ममार्ग में इस प्रकार के समुन्नत राष्ट्र (भारत) में हमारे प्रचारकों को भेजना निर्बुद्धिता मात्र है।'

स्वामी जी वेदांत-मर्मज्ञ व उसके अपूर्व व्याख्याता थे। उन्होंने उसके सैद्धांतिक पक्ष को आत्मसात करने के साथ उसके व्यवहारिक पक्ष को रेखांकित किया। उन्होंने मानव में ईश्वर के दर्शन किए। उन्होंने कहा था– 'यदि तुम व्यक्त ईश्वर-रूप अपने भाई को प्रेम नहीं कर सकते, तो उस ईश्वर की उपासना कैसे करोगे, जो अव्यक्त है।' उनका दृढ़ विश्वास था कि सच्ची धार्मिकता मानव-मानव के बीच स्नेह, सौहार्द व सद्भाव के संवर्द्धन में निहित है। उनकी मान्यता थी- 'एकं सद् विप्रा बहुधा वदंति' - संसार में एक ही परम सत्ता विद्यमान है, ऋषियों ने उसी एक का भिन्न नामों से वर्णन किया है। गीता के सातवें अध्याय के सातवें श्लोक का उद्धरण - 'मयि सर्वविदं प्रोतं सूत्रे मणिगणा इव' (मैं इस जगत् में मणियों के भीतर सूत्र की भाँति विद्यमान हूँ) देते हुए उन्होंने कहा था - 'इस एक मणि को एक विशेष धर्म, मत या संप्रदाय कहा जा सकता है। पृथक् -पृथक् मणियाँ एक-एक धर्म हैं और प्रभु ही सूत्र रूप में उन सब में वर्तमान हैं।'

उनका चिंतन यथार्थ के धरातल पर अवस्थित था। अतएव पराधीन भारत की तत्कालीन परिस्थितियों में उन्होंने देशानुराग को धर्मानुराग से बढ़ कर माना। वैयक्तिक मोक्ष की अपेक्षा राष्ट्र की मुक्ति पर अधिक बल दिया। इसीलिए वे आज भी प्रासांगिक हैं।

MV_Jan_2017_Q7:Layout 1 12/14/2016 11:34 AM Page 6

आज समाज जीवन में सर्वत्र भारी असमानता देखने को मिलती है। एक ओर तो धन-बल और बाहुबल से युक्त अतुलित बलशाली-साधन सम्पन्न वर्ग- वहीं दूसरी ओर इसके विपरीत साधन विहीन लोग। इस असमानता को देखकर किसी भी सहृदय व्यक्ति का उसी प्रकार से विचलित हो जाना स्वाभाविक है, जिस प्रकार युद्ध क्षेत्र में रथ पर सवार अतुलित बलशाली रावण और नंगे पाँव वनवासी राम को आमने-सामने देखकर विभीषण विचलित हो गया था, वह सहसा कह उठा 'नाथ न रथ नहिं तन पद त्राना। केहि विधि जितब धीर बलवाना।।' विभीषण की इस शंका पर राम ने कहा- 'सुनहु सखा कह कृपानिधाना। जेहिं जय होई सो स्यंदन आना।।' मित्र युद्ध में जिस से जय होती है वह रथ दूसरा ही है। राम ने युद्ध में विजय के लिए जिस रथ का वर्णन किया है वास्तव में उसी रथ से समाज जीवन में व्याप्त असमानता पर विजय पाई जाती है। समाज जीवन में विजय दिलाने वाले इस रथ की विशेषताओं की विवेचना कर रही हैं प्रख्यात शिक्षाविद् डॉ. शीला कमल टावरी।

MV_Jan_2017_Q7:Layout 1 12/14/2016 11:34 AM Page 7

डॉ. शीला कमल टावरी

जेहि जय होइ सो स्यंदन आना

लगातार तीन दिन और तीन रातें युद्ध करने के बाद सुमित्रानंदन लक्ष्मण ने इंद्रजित मेघनाद को मार गिराया। राम अतीव प्रसन्न हुए और उन्होंने अपने अनुज लक्ष्मण का अत्यंत लाड़ और प्यार से अभिनंदन किया। राम के पाले में जितना हर्ष था, उतना ही दुःख एवं विषाद रावण के खेमे में होना स्वाभाविक था। अपने महापराक्रमी पुत्र के वध का समाचार सुन कर रावण पहले तो मूर्च्छित-सा हो गया। 'मेरे अजेय पुत्र का वध?' थोड़ा होश में आते ही पुत्रशोक से व्यथित रावण जिंदगी में शायद पहली बार अपने सेनापतियों के आगे हाथ जोड़ कर खड़ा हुआ और उसने राम को चारों ओर से घेर लेने का आदेश दिया। जल्द ही दुःख की जगह अपरिमित क्रोध ने ले ली। यह त्रिलोक प्रसिद्ध अहंकारी रावण का क्रोध था। अहंकार और क्रोध जब एकत्र आते हैं तब वे अन्य किसी की अपेक्षा उसी अहंकारी क्रोधी के विनाश का कारण बनते हैं। किसी ने खूब ही कहा है– 'Anger is that acid which damages the vessel more in which it is stored than the object on which it is poured.'

अब राम और रावण का आमने-सामने युद्ध होना अटल था। और इस तरह राम और रावण का युद्ध प्रारंभ हुआ। सोने की लंका का स्वामी, अतुलित बलशाली रावण अपनी पूरी शक्ति और सज-धज के साथ रथ पर चढ़ कर समरभूमि में आया। राम भूमि पर खड़े हैं और रावण रथ पर! इस तरह यह अभूतपूर्व युद्ध शुरू हो गया। कालचक्र की यह एक अद्‌भुत घटना थी। उस युद्धभूमि में उपस्थित छोटा-बड़ा हर कोई सुध-बुध भूल कर यह अनन्य असाधारण युद्ध देखने लगा। आकाश में सभी देवता, यक्ष, किन्नर, गंधर्व यह युद्ध देखने के लिए एकत्र हो गए। एक ओर अपने बल, तप और वीर्य के साथ क्रोधोन्मत्त अहंकारी लंकेश्वर और दूसरी

MV_Jan_2017_Q7:Layout 1 12/14/2016 11:34 AM Page 8

ओर समुद्र को भी उसकी मर्यादा की याद दिलाने वाले संयमी, विवेकी राम। महर्षि वाल्मीकि ने इस युद्ध का उतना ही समुचित वर्णन किया है--

गगनं गगनाकारं सागरः सागरोपमः।
रामरावणयोर्युद्धं रामरावणयोरिव।।

इसकी कोई तुलना नहीं है। आकाश की विशालता के लिए और समुद्र की गहराई के लिए और कोई उपमा नहीं है। राम-रावण युद्ध के लिए भी कोई उपमा नहीं है। लेकिन फिर भी रावण रथारूढ़ है और राम धरती पर खड़े हैं। यह देख कर देवता, यक्ष, किन्नर सभी कहने लगे 'यह तो असमान युद्ध हो रहा है।'–

भूमौ स्थितस्य रामस्य रथस्थस्य च रक्षसः।
न समं युद्धमित्याहुर्देवगन्धर्वकिन्नराः।।

यह सब देख कर विभीषण तो और भी अस्वस्थ हो गए। बहुत बाद में कालिदास ने भी कहा है- 'अतिस्नेहःपापशङ्की।' अतिप्रेम से मन में बुरे विचार आने लगते हैं। रावण को रथ पर और श्रीराम को रथ के बिना देखकर उसके मन में संदेह होने लगा– यह वनवासी राम, बिना रथ के, इस महाबली रावण को कैसे जीत पाएँगे? गोस्वामी तुलसीदासजी के 'मानस' में विभीषण की यह अधीर शंका वाणीरूप लेकर ऐसे व्यक्त होती है–

नाथ न रथ नहिं तन पद त्राना।
केहि बिधि जितब बीर बलवाना।।

'न आपके पास रथ है, न शरीर पर कवच है, यहाँ तक कि पैरों में जूते तक नहीं हैं। (खडाऊँ भी चित्रकूट में भरत को दे दिए थे)। यह बलवान और वीर रावण कैसे जीता जाएगा?'

गोस्वामी तुलसीदासजी का कहना है कि उन्होंने 'मानस' की रचना 'स्वान्तःसुखाय' की। ग्रंथ के प्रारंभ में ही यह उनका स्पष्ट कथन है– 'स्वान्तःसुखाय तुलसी रघुनाथगाथा। भाषानिबन्धमतिमंजुलमातनोति।'

'युद्ध में जय चमचमाते स्वर्णिम रथों से नहीं हुआ करती। जिससे जय होती है, वह रथ दूसरा ही है।' शौर्य और धैर्य उस रथ के पहिये हैं और सत्य तथा शील उसकी मजबूत ध्वजा और पताका है। बल, विवेक, इंद्रिय संयम और परोपकार ये उस रथ के चार घोड़े हैं और क्षमा, दया और समतारूपी रस्सियों से ये घोड़े रथ में बंधे हुए हैं। ईश्वर भक्ति इसका सारथि है। वैराग्य इसकी ढाल है, संतोष तलवार, दान परशु, बुद्धि इसकी प्रचंड शक्ति और श्रेष्ठ विज्ञान इसका धनुष है। निर्मल और स्थिर मन इसका तरकश है, मन पर नियंत्रण और और अहिंसा इत्यादि इसके तरकश के बाण हैं। बड़ों का आदर और पूजन इसका अभेद्य कवच है। जिसके पास ऐसा श्रेष्ठ चरित्ररूपी धर्मरथ हो वह 'विरथ' कैसा!'

–रघुनाथजी की कथा को तुलसी अपने अंतःकरण के सुख के लिए सरल भाषा में विस्तार से कह रहे हैं। 'ग्रंथ के समापन पर भी गोस्वामी जी उसी तर्ज पर 'मानस' रचना 'स्वान्तस्तमःशान्तये' करने की बात कहते हैं। लेकिन जब उद्दिष्ट उच्चतम हों; सत्यं शिवं सुन्दरम् हों; और जिस के केंद्र में स्वयं श्रीरघुनाथ हों; वह रचना कालजयी हो इस में आश्चर्य कैसा? अपने अन्तस् के तम को शांत करने के साथ ही गोस्वामीजी ने जगत के त्रिविधताप शांति का उपाय भी उपर्युक्त प्रश्न के उत्तर के निमित्त से दिया है। विभीषण की घबराहट देखकर राम कहते हैं.-

MV_Jan_2017_Q7:Layout 1 12/14/2016 11:34 AM Page 9

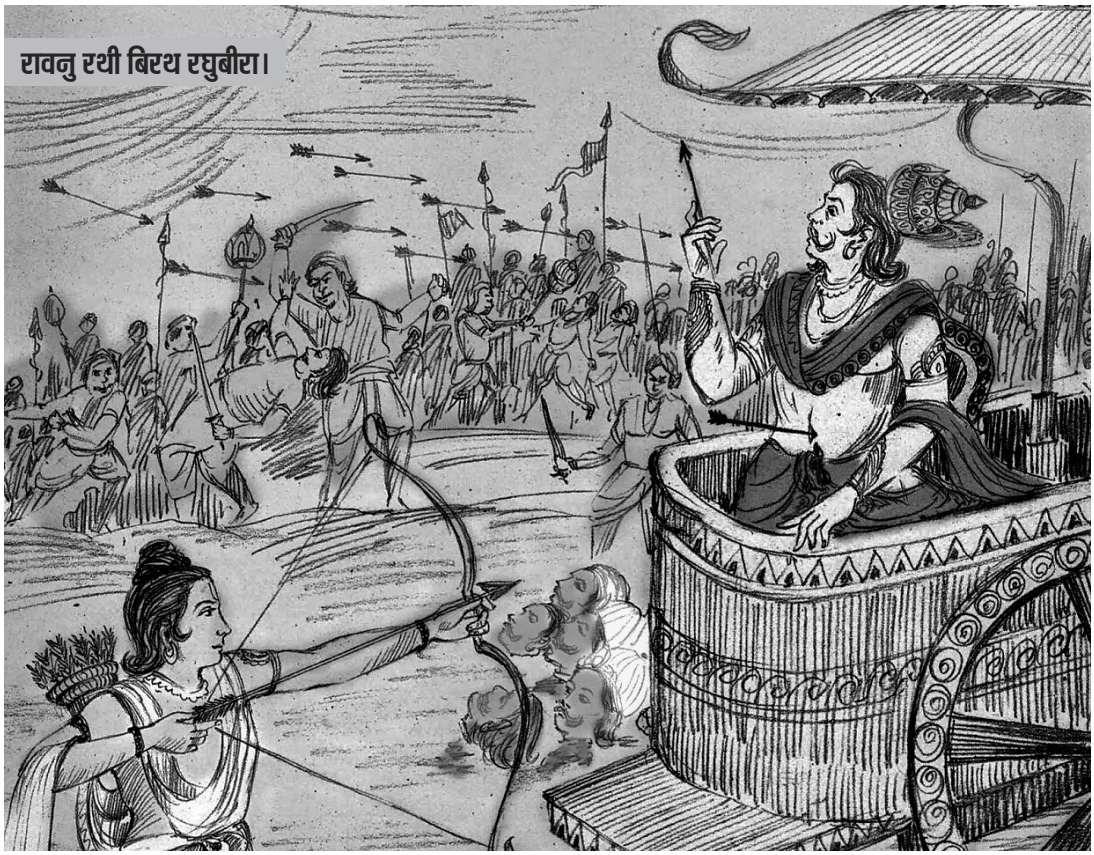

'सुनहु सखा कह कृपानिधाना।
जेहिं जय होइ सो स्यंदन आना।।'

'सुनो मित्र युद्ध में जय चमचमाते स्वर्णिम रथों से नहीं हुआ करती। जिससे जय होती है, वह रथ दूसरा ही है।' इसके पश्चात् श्रीराम जीवन के युद्ध में विजय दिलाने वाले जिस रथ का वर्णन करते हैं वह विश्व के साहित्य की अनुपम धरोहर ही कहलाई जाएगी। राम कहते हैं, – 'सखा विभीषण, शौर्य और धैर्य उस रथ के पहिये हैं और सत्य तथा शील उसकी मजबूत ध्वजा और पताका है। बल, विवेक, इंद्रिय संयम और परोपकार ये उस रथ के चार घोड़े हैं और क्षमा, दया और समतारूपी रस्सियों से ये घोड़े रथ में बंधे हुए हैं। ईश्वर भक्ति इस रथ का सारथी है। वैराग्य इसकी ढाल है, संतोष तलवार, दान इसका परशु, बुद्धि इसकी प्रचंड शक्ति और श्रेष्ठ विज्ञान इसका धनुष है। निर्मल और स्थिर मन इसका तरकश है, मन पर नियंत्रण और अहिंसा इत्यादि इसके तरकश के बाण हैं। बड़ों का आदर और पूजन इसका अभेद्य कवच है। मित्र! जिसके पास ऐसा श्रेष्ठ चरित्ररूपी धर्मरथ हो वह 'विरथ' कैसा! ऐसा वीर 'रथी' तो संसाररूपी दुर्जेय शत्रु को भी जीत सकता है। तुम 'रावण' की बात कर रहे हो। रावण तो इसके आगे कुछ भी नहीं है।'

राम के चरित्र में उपर्युक्त सभी गुण पूर्णता से उपस्थित हैं। 'सौरज और धीरज' के दो पहियों वाला ही वह रथ था जिस पर चढ़ कर, सीता को लक्ष्मण के साथ गुफा में सुरक्षित भेज कर, राम विशाल राक्षसी सेना लेकर

MV_Jan_2017_Q7:Layout 1 12/14/2016 11:34 AM Page 10

आए हुए खर-दूषण का सामना करने के लिए अकेले ही चल पड़े थे। सत्य और शील के सामर्थ्य पर ही राम राज-पाट छोड़ कर अज्ञात, दुर्गम वन में बिना किसी फौज-फाटे को साथ लिए निकल पड़े थे, चौदह वर्ष की लंबी कालावधि के लिए। साथ में पाथेय था केवल अपने शील और सदाचार का! अयोध्या के सिंहासन के लिए राम को वैसे कहा जाए तो लड़ने की भी आवश्यकता नहीं थी। अपने प्राणों से भी 'ज्यादा प्यार करने वाले चक्रवर्ती राजा पिता दशरथ थे जो पूर्व में ऋषियों द्वारा भी राम को माँगने पर, उनके शापों की चिंता किए बिना, 'नैव दास्यामि पुत्रकम्' – 'राम को कभी भी नहीं दूँगा' ऐसा कह चुके थे। अयोध्या की सारी जनता राम को चाहती थी। अयोध्या का राजसिंहासन राम के लिए कहीं से भी दुर्लभ नहीं था। परंतु यह राम का शील और सत्यप्रेम ही थे जिसने उन्हें 'राम' बनाया।

किसी भी परिस्थिति में अपना विवेक न खोना राम की शक्ति है। अपनी बुद्धि एवं बाहुबल पर उन्हें पूरा भरोसा है। सुग्रीव के साथ तालमेल और वानरसेना का संगठन उन्होंने स्वयं की शक्ति पर किया। वाल्मीकि रामायण में राम जिस प्रकार हनुमान का बुद्धिकौशल परखते हैं, हनुमान की देहबोली, उसके चेहरे के हाव भाव पढ़ कर जिस प्रकार उसकी विद्वत्ता की परीक्षा करते हैं, वह वर्णन आज के किसी भी संप्रेषण विशेषज्ञ (Communication Expert) को चौंका देने वाला है।

गीता में वर्णित 'दुःखेष्वनुद्विगंमना सुखेषु विगतस्पृहः' -दुःख में विचलित न होने वाले और सुख में निःस्पृह रहने वाले समदर्शी व्यक्तित्व का मूर्तिमंत रूप राम हैं। राम के साथ जीवन भर छाया बन कर रहने वाले लक्ष्मण का संपूर्ण व्यवहार पूरे महाकाव्य में अन्यथा शायद ही कुछ बोलने वाली सुमित्रा के एक ही वक्तव्य में सिमटा हुआ है–

'रामं दशरथं विद्धि, मां विद्धि जनकात्मजाम्। अयोध्यां अटवीं विद्धि...' अब राम को ही दशरथ समझना और मेरी जगह सीता को, वन ही अब तुम्हारे लिए अयोध्या है...। यह है मर्यादा। अब न कोई संदेह सुमित्रा के मन

आज दुनिया भर में आतंक इसीलिए छाया है कि क्षमा, कृपा, समता की रस्सियों से बल, विवेक, इंद्रियसंयम और परहित के घोड़ों को जीवन के रथ से जोड़ कर रखा नहीं गया है। या यूँ कहें कि हमारे जीवन रथ से उपर्युक्त इन चारों घोड़ों का और उन्हें बाँध कर रखने वाली क्षमा, कृपा, समता इन रस्सियों का अस्तित्व ही समाप्त हो गया है।

MV_Jan_2017_Q7:Layout 1 12/14/2016 11:34 AM Page 11

में है, न लक्ष्मण के। ये सब राम की शक्ति हैं, राम के कवच हैं।

इस प्रकार के सामाजिक जीवन की रचना करने वाली, समाज जीवन का रक्षण करने वाली व्यवस्था 'धर्म' है। यह सब राम के आचरण में है। इसीलिए 'रामो विग्रहवान धर्मः'– 'राम धर्म का साकार रूप हैं' ऐसा कहा गया है। रावण के आगे 'विरथ' खड़ा होकर भी विजय के प्रति आत्मविश्वास को वही प्रदर्शित कर सकता है जिसका जीवन इस प्रकार धर्मप्राण होगा।

भारत के आध्यात्मिक जीवन के आधार स्तंभ रहे हैं- सत्य और धर्म। यहाँ बेईमानी, असत्य के लिए कोई स्थान नहीं है। इसी के आत्मिक बल पर इस देश का अनादि इतिहास खड़ा है। रावणपुत्र मेघनाद का वध करना आसान नहीं था। वह महापराक्रमी था, उसे भी अनेक दैवी शक्तियाँ प्राप्त थीं। उस पर 'ऐन्द्रास्त्र' छोड़ते समय लक्ष्मण का असली बल 'ऐन्द्रास्त्र' नहीं राम का सत्य और धर्म हैं। वाल्मीकि रामायण में लक्ष्मण कहते हैं– 'धर्मात्मा सत्यसंघश्च रामो दाशरथिर्यदि'– 'यदि दशरथ पुत्र राम धर्मात्मा एवं सत्यप्रतिज्ञ हैं और पुरुषार्थ में भी वे अतुलविक्रम हैं, तो हे अस्त्र! तुम जाकर मेघनाद का वध करो।' अन्य किसी भी शक्ति से धर्म की शक्ति सर्वोपरि है।

'जेहि जय होइ सो स्यंदन आना' से आरंभ कर केवल साढ़े तीन चौपाइयों में गोस्वामीजी ने धर्म का संपूर्ण स्वरूप गागर में सागर जैसा भर दिया है। आज धर्म के नाम पर हाहाकर मचाने वाले सभी सुधीजनों को एक बार इन चौपाइयों को समझ कर पढ़ना आवश्यक है। ऐसा कौन-सा 'धर्म' है जो शौर्य, धैर्य,

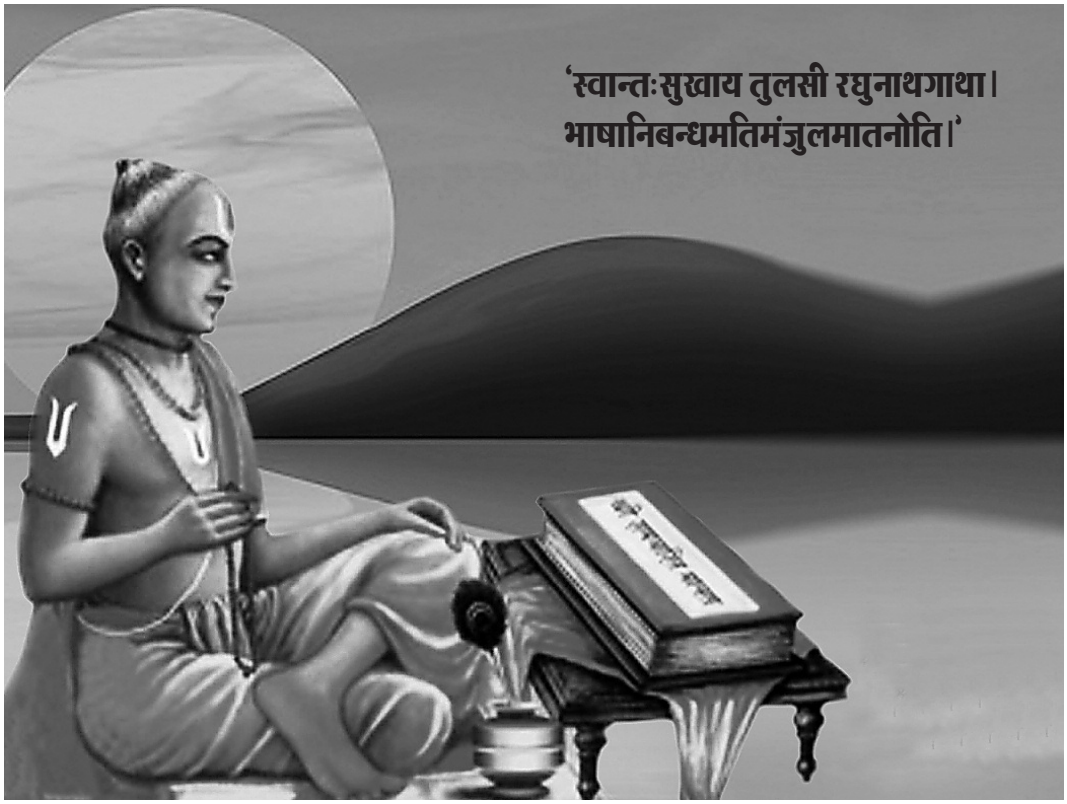

MV_Jan_2017_Q7:Layout 1 12/14/2016 11:34 AM Page 12

सत्य और शील का विरोधी है? हम किस बात के लिए लड़ रहे हैं? आज दुनिया भर में आतंक इसीलिए छाया है कि क्षमा, कृपा, समता की रस्सियों से बल, विवेक, इंद्रियसंयम और परहित के घोड़ों को जीवन के रथ से जोड़ कर रखा नहीं गया है। या यूँ कहें कि हमारे जीवन रथ से उपर्युक्त इन चारों घोड़ों का और उन्हें बाँध कर रखने वाली क्षमा, कृपा, समता इन रस्सियों का अस्तित्व ही समाप्त हो गया है। जो हम कहें, जिस एक ग्रंथ को हम मानें, वही तुम भी मानो– न मानने वाले 'मारने' के ही योग्य हैं– इसी बुद्धि से धरती पर का जीवन दुःसह होता चला जा रहा है।

हमारी संस्कृति में धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष इन चारों पुरुषार्थों में 'धर्म' सबसे प्रथम स्थान पर है– वह 'विग्रहवान धर्म 'जो स्वयं चक्रवर्ती सम्राट दशरथ का युवराज होकर भी निषादराज को गले लगाता है, अपनी पत्नी की अँगूठी देकर नाव की उतराई चुकाता है, वृद्ध गिद्ध जटायु को पिता समान आदर देकर उसका तर्पण करता है, स्वयं को 'अधम ते अधम अधम अति नारी' कहने वाली भीलनी की भक्ति देखकर उसको 'भामिनी' का सम्मानपूर्ण उद्‌बोधन देकर उसके जूठे बेर खाता है, और 'सुंदरकांड' में वानर वीरों के विरोध के होते हुए भी विभीषण के प्रति अपना 'शरणागतवत्सलता' का प्रण निभाता है; इतना ही नहीं जिस शत्रु के विनाश के लिए इतना अट्‌टहास किया, 'मरणान्तानि वैराणि' कह कर उसकी उचित अन्त्येष्टि क्रिया करने– कराने का विवेक, संयम और बौद्धिक संतुलन रखता है- वही धर्म मनुष्य को 'नर से नारायण' बनाता है। करुणा और विनय इस धर्म के केंद्रस्थ गुण हैं। इसीलिए रणभूमि में जब देवराज इंद्र राम के लिए स्वयं अपना रथ सारथिसह भेज देते हैं तो राम उसे विनयपूर्वक स्वीकार तो कर लेते हैं, परंतु मातलि सहस्राक्ष इंद्र का सारथि है यह कभी नहीं भूलते। उसे

रामायण की कथा बुद्धि, हृदय एवं जीवन में जो कुछ भी 'सत्यं, शिवं और सुन्दरम्' हो उसके परमोत्कर्ष पर पहुँचे हुए मानव के 'मर्यादापुरुषोत्तमत्व' की अभिव्यक्ति है। राम वास्तव में इस धरातल पर जन्मे थे क्या यह भी विषय नहीं है। वह मानव के 'मानवत्व' के सोच की परिसीमा निश्चित ही हैं और हम इस सर्वोच्च कोटि की उदात्त विरासत के वारिस हैं।

वे विनयपूर्वक कहते हैं– 'स्मारये त्वां न शिक्षये' 'भाई, तुम्हें तो देवराज इंद्र के रथ चलाने का अभ्यास है। तुम्हें बताने की क्या आवश्यकता है? परंतु मैं एकाग्रचित्त होकर युद्ध करना चाहता हूँ...अतः मैं तुम्हें केवल याद दिला रहा हूँ, सिखा नहीं रहा हूँ।' राम तो सदैव कहते रहे– 'आत्मानं मानुषं मन्ये' मैं स्वयं को एक साधारण मनुष्य मानता हूँ। यही चरित्र उन्हें जन-जन के अन्तस् को आराम देने वाले 'राम' बनाता है। मानुष का देवत्व तक का यह प्रवास ही 'रामायण' है। रामकथा मानव संस्कृति द्वारा रचित आदिकाव्य है और महर्षि वाल्मीकि आदिकवि। रामायण की महत्ता अगर इतनी ही होती तो आज युगों-युगों पश्चात् वह केवल एक परिभाषा बन कर रह गई होती, वह हमारे हृदयों पर ऐसे राज नहीं कर सकती थी जैसी आज कर रही है। यह कथा बुद्धि, हृदय एवं जीवन में जो कुछ भी 'सत्यं, शिवं और सुन्दरम्' हो उसके परमोत्कर्ष पर पहुँचे हुए मानव के 'मर्यादापुरुषोत्तमत्व' की अभिव्यक्ति है। राम वास्तव में इस धरातल पर जन्मे थे क्या, यह भी विषय नहीं है। वह मानव के 'मानवत्व' के सोच की परिसीमा निश्चित ही हैं और हम भारतीय परम भाग्यशाली हैं कि

MV_Jan_2017_Q7:Layout 1 12/14/2016 11:34 AM Page 13

हमारे 'धर्म' का विस्तार इतना विशाल है और हम इस सर्वोच्च कोटि की उदात्त विरासत के वारिस हैं।

रामायण का इतिहास क्या है? हिंदी के मूर्धन्य कवि श्री सुमित्रानंदन पंत का प्रसिद्ध कथन है–

वियोगी होगा पहला कवि
आह से उपजा होगा गान।
उमड़ कर आँखों से चुपचाप
बही होगी कविता अनजान।।

वाल्मीकि ने रामकथा कब लिखी होगी? यह ग्रंथ वास्तव में कितना पुराना है? इन विवादों पर चर्चा करना इस लेख का विषय नहीं है। किंतु जैसा कि वाल्मीकि रामायण के अनुशीलन से ज्ञात होता है, लक्ष्मण सीता माता को विजनवास में छोड़ कर अयोध्या लौट गए थे। निर्वासन के सत्य का ज्ञान होने के बाद दुःख से विकल सीता को ऋषि अपने आश्रम में लेकर आ चुके थे। और दुःख पर करुणा से पिघले हृदय से वाल्मीकि सुबह-सुबह तमसा के तट पर स्नानार्थ चले जा रहे थे। वाल्मीकि राम को जानते थे। राम की महानता पर उन्हें किसी प्रकार की शंका नहीं थी। फिर सीता की यह अवस्था क्यों? मन में विचारों का कोलाहल मचा हुआ था। और ऐसे में 'क्रौंचमिथुनादेकं' की करुण चीख.... और उस निष्पाप पक्षी की रक्तरंजित निष्प्राण देह का धरती पर आ गिरना... ऋषि के हृदय का सारा 'शोको श्लोकत्वमागतः'– सारा दुःख, सारी वेदना, सारा शोक श्लोक का रूप लेकर उनके मुख से बह निकला.... 'माँ निषाद त्वमगमः प्रतिष्ठां शाश्वतीः समांः।, अरे हत्यारे! तूने प्रेमातुर जोड़े में से एक की हत्या की है। तुझे अनंतकाल तक प्रतिष्ठा न मिले...। अकारण हिंसा एक निष्पाप पक्षी की भी क्षम्य नहीं है। आश्रम में लौट कर भी महर्षि का शोकसंतप्त हृदय शांत नहीं हो सका था। और उसी से उमड़-उमड़ कर 'कविता सरिता' के रूप में 'रम्य रामायणी कथा' का– मानवधर्म की इस अनुपम गाथा का– जन्म हुआ– शायद 'स्वान्तस्तपः शान्तये' ही। परंतु एक बात निश्चित है, करुणा धर्म को प्रवाहमान बनाती है। करुणा के बिना धर्म 'धर्म' नहीं हो सकता, और धर्महीन जीवन 'जीवन' ही नहीं है। अपना श्रेष्ठत्व सिद्ध करने के लिए या अन्य किसी भी कारण से निष्पापों की हत्या करने वाला या उसे उचित ठहराने का दुर्बल प्रयास करने वाला कोई भी विचार 'धर्म' की श्रेणी में नहीं आ सकता। आज आवश्यकता है कि हमारी आने वाली पीढ़ियों को हम अपनी यह अनुपम वैचारिक विरासत अक्षुण्ण रूप में सौंपे। शिक्षा विभाग में, विद्यालयों में क्या हो रहा है, क्या होना चाहिए, क्या पढ़ाया जाना चाहिए यह एक अलग बड़ा विषय है। संप्रति अर्थ समझ कर इस महान् ग्रंथ के कुछेक भागों का ही परिचय नई पीढ़ी को करा दें तो शुरुआत तो अच्छी होगी।

करुणा धर्म को प्रवाहमान बनाती है। करुणा के बिना धर्म 'धर्म' नहीं हो सकता, और धर्महीन जीवन 'जीवन' ही नहीं है। अपना श्रेष्ठत्व सिद्ध करने के लिए या अन्य किसी भी कारण से निष्पापों की हत्या करने वाला या उसे उचित ठहराने का दुर्बल प्रयास करने वाला कोई भी विचार 'धर्म' की श्रेणी में नहीं आ सकता। आज आवश्यकता है कि हमारी आने वाली पीढ़ियों को हम अपनी यह अनुपम वैचारिक विरासत अक्षुण्ण रूप में सौंपे। शिक्षा विभाग में, विद्यालयों में क्या हो रहा है, क्या होना चाहिए, क्या पढ़ाया जाना चाहिए यह एक अलग बड़ा विषय है।

लेखिका पर्यावरणविद् और शिक्षाविद् हैं।

MV_Jan_2017_Q7:Layout 1 12/14/2016 11:34 AM Page 14

भारत और भारतीय समाज पराधीनता की पराभूत मानसिकता से ग्रस्त होकर हताश और निराश था, भारत की सांस्कृतिक-आध्यात्मिक परंपरा और प्राचीन ग्रंथों में उपलब्ध ज्ञान-राशि को वह दकियानूसी मानकर छोड़ने की राह पर चल पड़ा था। आत्मविश्वास खोता जा रहा था, इतना ही नहीं, सब प्रकार से दुःख-दैन्य के दंश को भोगने के लिए मजबूर हो चला था। चारों ओर अंधकार था, घनघोर अंधकार। किसी को कोई मार्ग नहीं सूझ रहा था, किधर जाना है और कैसे जाना है, कोई नहीं बता पा रहा था। ऐसे समय स्वामी विवेकानंद सचमुच एक प्रकाश-पुंज के रूप में प्रकट हुए दिखाई देते हैं। वह एक ऐसा व्यक्तित्व था जिसने भारत और विश्व दोनों को एक साथ समानांतर रूप से प्रभावित किया, आलोकित किया। भारत में आत्मगौरव एवं आत्मविश्वास का भाव जगाया, विशेषकर भारत के युवकों को अपने स्वयं के पुरुषार्थ के बल पर भारत माता को दुःख-दैन्य की अवस्था से बाहर निकालकर, इसे फिर से विश्व में गौरवमयी स्थान पर आरूढ़ करने के लिए संकल्पबद्ध और संगठित होने के लिए प्रेरित किया और इस सब काम के लिए भारतीय समाज को इस घोष वाक्य के रूप में यह मंत्र दिया- 'उत्तिष्ठत जाग्रत प्राप्य वरान्निबोधत' (उठो, जागो और तब तक चलते रहो जब तक अपने लक्ष्य तक पहुँच न जाओ)।

MV_Jan_2017_Q7:Layout 1 12/14/2016 11:34 AM Page 15

-डॉ. बजरंगलाल गुप्ता

युवाओं के प्रेरणापुंज स्वामी विवेकानंद

आज से एक सौ चौवन वर्ष पूर्व 12 जनवरी, 1863 को कोलकाता में एक विलक्षण बालक ने जन्म लिया। बचपन में उसे 'बिले', 'नरेन' और 'नरेंद्रदत्त नाम मिले और यही आगे चलकर स्वामी विवेकानंद के नाम से विश्वविख्यात हुआ। उस समय देश और दुनिया विचित्र तमस भरी परिस्थितयों से गुजर रहे थे। भारत और भारतीय समाज पराधीनता की पराभूत मानसिकता से ग्रस्त होकर हताश और निराश था, भारत की सांस्कृतिक-आध्यात्मिक परंपरा और प्राचीन ग्रंथों में उपलब्ध ज्ञान-राशि को वह दकियानूसी मानकर छोड़ने की राह पर चल पड़ा था। आत्मविश्वास खोता जा रहा था, इतना ही नहीं, सब प्रकार से दुःख-दैन्य के दंश को भोगने के लिए मजबूर हो चला था। दूसरी ओर विश्व, विशेषकर अमेरिका व यूरोप के देश अपनी औपनिवेशिक साम्राज्यवादी मनोवृत्ति के कारण अन्याय-अत्याचार व शोषण के पर्याय बनते जा रहे थे, धर्मांधता के कारण जोर-जबरदस्ती, लोभ-प्रलोभन से मतांतरण को वे अपना अनिवार्य कर्त्तव्य व अधिकार दोनों मान बैठे थे, भौतिक समृद्धि से मदहोश तथा राज्य व सैनिक शक्ति के अहंकार से ग्रस्त हो चले थे, इन सबके बीच उन देशों के समाज-जीवन में चारों ओर बेचैनी, असंतोष, अशांति, व्यग्रता-उग्रता, सूनापन एवं अवसाद जैसे मनोरोग भी बढ़ रहे थे। इस प्रकार वह एक ऐसा समय था, जब चारों ओर अंधकार था, घनघोर अंधकार। किसी को कोई मार्ग नहीं सूझ रहा था, किधर जाना है और कैसे जाना है, कोई नहीं बता पा रहा था। ऐसे समय स्वामी विवेकानंद सचमुच एक प्रकाश-पुंज के रूप में प्रकट हुए दिखाई देते हैं। वह एक ऐसा व्यक्तित्व था जिसने भारत और विश्व दोनों को एक साथ

MV_Jan_2017_Q7:Layout 1 12/14/2016 11:34 AM Page 16

11 सितंबर, 1893 को शिकागो में आयोजित सर्वधर्म सभा

समानांतर रूप से प्रभावित किया, आलोकित किया। भारत में आत्मगौरव एवं आत्मविश्वास का भाव जगाया, विशेषकर भारत के युवकों को अपने स्वयं के पुरुषार्थ के बल पर भारत माता को दुःख-दैन्य की अवस्था से बाहर निकालकर, इसे फिर से विश्व में गौरवमयी स्थान पर आरूढ़ करने के लिए संकल्पबद्ध और संगठित होने के लिए प्रेरित किया और इस सब काम के लिए भारतीय समाज को इस घोष वाक्य के रूप में यह मंत्र दिया - 'उत्तिष्ठत जाग्रत प्राप्य वरान्निबोधत' (उठो, जागो और तब तक चलते रहो जब तक अपने लक्ष्य तक पहुँच न जाओ)।

शिकागो की सर्वधर्म सभा में पहुँचकर और बाद में अनेक देशों में भ्रमण कर अपने व्याख्यानों - प्रवचनों, चर्चा-परिचर्चाओं के माध्यम से समस्त विश्व को एक नए दर्शन व दृष्टि के आलोक से आलोकित भी किया। 11 सितंबर, 1893 को शिकागो की सर्वधर्म सभा के मंच पर अपने प्रथम भाषण के संबोधन में जब उन्होंने, 'अमेरिकी बहनो व भाईयो' कहा तो समूचा सभागार तालियों की गड़गड़ाहट से गूँज उठा। इस संबोधन के माध्यम से विवेकानंद ने उस भारतीय दृष्टि की ओर संकेत किया था जो विश्व-बाजार नहीं, अपितु विश्व-परिवार की संकल्पना में विश्वास रखती है और इसलिए हम विश्व के सभी व्यक्तियों को अपना ही आत्मीय मानकर व्यवहार करते हैं। उन्होंने वेदांत दर्शन को भी विभिन्न संदर्भों में एवं विभिन्न प्रकारों से समझाकर यह भी बताया था कि इसके आलोक में चलकर हम विश्व शांति, विश्व भाईचारा, एवं सर्वेभवन्तु सुखिनः के लक्ष्य तक अधिक आसानी से पहुँच सकते हैं। उन्होंने घोषणा की थी कि यह समय धार्मिक कट्टरता, धार्मिक उन्माद, मतांतरण, संघर्ष

MV_Jan_2017_Q7:Layout 1 12/14/2016 11:34 AM Page 17

एवं शत्रुतापूर्ण भावनाओं को बढ़ाने का नहीं है, बल्कि आओ हम सब मिलकर पारस्परिक सहयोग एवं पारस्परिक समन्वय के एक नए युग का सूत्रपात करें और इसकी पुष्टि में उन्होंने शिकागो की उस सभा में निम्नलिखित श्लोक का पाठ किया था-

रुचिनां वैचित्र्यादृजुं कुटिलनानापथजुषाम्
नृणामेको गम्यस्त्वमसि पयसामर्णव इव।।

स्वामी विवेकानंद ने अमेरिका जाने से पूर्व पाँच वर्षों तक और विदेश यात्रा से लौटकर आने के बाद चार वर्षों तक कुल नौ वर्षों तक विस्तार से भारत-भ्रमण किया। इस भारत-भ्रमण के दौरान उन्होंने देश की स्थिति-परिस्थिति और दशा व दिशा का प्रत्यक्ष दर्शन एवं अनुभव प्राप्त किया। उन्हें लगा कि भारत का गौरवपूर्ण, सुखी-समृद्ध-स्वावलंबी जीवन और यहाँ की समृद्ध सामाजिक-सांस्कृतिक परंपरा सब में जबरदस्त गिरावट आई है। यह देख वे बहुत व्यथित हो गए और तब मन ही मन निश्चय किया कि मैं इस चित्र को बदलकर भारत के पुनरुत्थान के लिए काम करूँगा। उनकी इच्छा थी कि जगती के आँगन में भारत फिर से एक स्वाभिमानी, शक्तिशाली, स्वावलंबी-समृद्धशाली, संस्कारित और संगठित राष्ट्र के रूप में अपना स्थान पा सके। राष्ट्रोत्थान के उद्देश्य की पूर्ति के लिए विवेकानंद की हमें निम्नलिखित बातों पर ध्यान देना होगा–

शक्ति

सबसे पहले हमें भारत के पुनरोदय के लिए आवश्यक शक्ति संचय एवं शक्ति संपादन करना होगा। इस दृष्टि से उनके विचारों में हमें पाँच प्रकार की शक्ति का संचय

MV_Jan_2017_Q7:Layout 1 12/14/2016 11:34 AM Page 18

करना होगा- संकल्पशक्ति, शारीरिक शक्ति, चरित्र शक्ति, अर्थ शक्ति और संगठन शक्ति।

संकल्प शक्ति

देश की दुर्दशा, समस्याओं एवं कठिनाइयों को देखकर हताश-निराश होने की बजाय इस चित्र को बदलने का संकल्प एवं दृढ़ इच्छा शक्ति का परिचय देना होगा। वे मानते थे कि दृढ़ संकल्प में से ही भावी प्रगति का मार्ग निकलता है।

शारीरिक शक्ति

विवेकानंद बलहीन, कमजोर एवं पौरुष शून्य व्यक्ति एवं समाज को अच्छा नहीं मानते थे। अतः व्यक्ति और राष्ट्र दोनों को बल सम्पन्न बनाने पर जोर देते थे। युवकों को संबोधित करते हुए उन्होंने कहा था कि, 'हे मेरे युवक बंधुओ! तुम बलवान बनो, यही तुम्हारे लिए मेरा उपदेश है। बलवान शरीर से अथवा मजबूत पुट्ठों से तुम गीता को अधिक समझ सकोगे।' वे आगे कहते हैं- 'मैं जो चाहता हूँ, वह है लोहे की नसें और फौलाद के स्नायु, जिनके भीतर ऐसा मन निवास करता हो, जो कि वज्र के समान पदार्थ का बना हो। बल, पुरुषार्थ, क्षात्रवीर्य और ब्रह्मतेज।' एक जगह तो उन्होंने यहाँ तक घोषणा कर दी थी- 'बल ही पुण्य है और दुर्बलता पाप।' वे तो यहाँ तक बोल उठे थे- 'अब झाँझ, मृदंग की बजाय रणभेरी, रणसिंगा व डमरू बजना चाहिए। हर-हर महादेव की गर्जना हो। शक्ति की पूजा चले।' इस प्रकार विवेकानंद की दृष्टि में देश के भीतर कानून व्यवस्था बनाए रखने एवं सीमा पर घुसपैठियों, आतंकवादियों एवं आक्रमणकारियों से सुरक्षा करने के लिए कमजोर नहीं, ताकतवर राज्यों और प्रबल सैन्य शक्ति की आवश्यकता होती है।

स्वामीजी शारीरिक बल शक्ति के साथ चरित्र शक्ति एवं संस्कार शक्ति को भी देश के भाग्योदय के लिए आवश्यक मानते थे। अतः वे देश के प्रत्येक व्यक्ति के अवगुणों एवं कमजोरियों को दूर कर प्रेम, स्नेह, आत्मीयता, प्रामाणिकता, महिला के प्रति मातृवत् सम्मान दृष्टि आदि सदगुणों को अपने भीतर विकसित करने का आग्रह करते रहते थे। भारत अपने सच्चरित्र जीवन के कारण ही विश्व में सम्मान प्राप्त करता रहा है।

चरित्र शक्ति

स्वामीजी शारीरिक शक्ति के साथ चरित्र शक्ति एवं संस्कार शक्ति को भी देश के भाग्योदय के लिए आवश्यक मानते थे। अतः वे देश के प्रत्येक व्यक्ति के अवगुणों एवं कमजोरियों को दूर कर प्रेम, स्नेह, आत्मीयता, प्रामाणिकता, महिला के प्रति मातृवत् सम्मान दृष्टि आदि सद्गुणों को अपने भीतर विकसित करने का आग्रह करते रहते थे। भारत अपने सच्चरित्र जीवन के कारण ही विश्व में सम्मान प्राप्त करता रहा है। इस संबंध में एक प्रसंग अत्यंत प्रेरणादायी है। स्वामीजी शिकागो की सड़क पर सैर करने निकले थे। कुछ अमेरिकी युवक-युवतियाँ उनके पीछे -पीछे चलते हुए उनके भगवा चोगे के लिबास पर भद्दी-भद्दी टिप्पणियाँ करने लगे। तब स्वामीजी रुके, पीछे मुड़कर देखा और उन्हें यह इतिहास प्रसिद्ध वाक्य कहा- 'सुनों तुम्हारे देश में एक टेलर किसी व्यक्ति को महान बना सकता है, परंतु मेरे देश में, जहाँ से मैं आया हूँ, वहाँ चरित्र और केवल चरित्र ही किसी व्यक्ति को महान

MV_Jan_2017_Q7:Layout 1 12/14/2016 11:34 AM Page 19

बनाता है' (Listen, in your country a tailer can make a man great but in my country where from I have come it is the character and character only which makes a man great) स्वामीजी का यह वाक्य सुनकर वे सब लज्जित होकर स्वामीजी के चरणों में नमस्तक हो गए।

अर्थ शक्ति

स्वामीजी अर्थ या धनशक्ति को भी देशोत्थान के लिए आवश्यक मानते थे। उनका पक्का मानना था कि हमें देश में व्याप्त भुखमरी, गरीबी, बेरोजगारी, बीमारी ओर विषमता को दूर करने के लिए शीघ्र प्रयास करना चाहिए। गरीबी के संबंध में उनके मन की संवदेना इन शब्दों में प्रकट हुई थी, 'दरिद्र लोगों का ख्याल आते ही मेरा हृदय असीम वेदना से कराह उठता है।' वे तो यहाँ तक कहा करते थे कि गरीब और दुःखी ईश्वर के ही रूप हैं, इन्हीं की पूजा व सेवा करो और इसी क्रम में उन्होंने 'दरिद्रदेवो भव' ओर 'दरिद्रनारायण' की संकल्पनाएँ प्रस्तुत कीं।

उन्होंने कृषि एवं उद्योग दोनों क्षेत्रों में उत्पादन बढ़ाने और अपने देश की वस्तुओं का विदेशी व्यापार करने के बारे में अनेक सुझाव दिए। श्री जमशेद जी टाटा को जापानी माचिस को भारत में बेचने की बजाय भारत

भारत में तीन मनुष्य साथ मिलकर पाँच मिनट के लिए भी कोई काम नहीं कर सकते हैं।' स्वामीजी कहा करते थे कि 'हमारे स्वभाव में संगठन का सर्वथा अभाव है, पर इसे हमें अपने स्वभाव में लाना है।' यदि हमें भारत को महान बनाना है तो इसके लिए आवश्यकता है संगठन की और बिखरी हुई इच्छा शक्ति को एकत्र लाने की। हमें ऋग्वेद की ऋचा 'संगच्छध्वं संवदध्वम् संवोमनांसिजानताम् की भावना से काम करना होगा।

में ही माचिस उद्योग लगाने और विज्ञान व तकनोलॉजी की दृष्टि से अनुसंधान केंद्र बनाने का सुझाव दिया था। इस प्रकार वे भारत को फिर से एक समृद्धशाली-स्वावलंबी राष्ट्र के रूप में देखना चाहते थे।

संगठन शक्ति

स्वामीजी ने संगठन शक्ति पर बड़ा जोर दिया था। देश में संगठन के अभाव के संबंध में दुःख प्रकट करते हुए उन्होंने एक पत्र में लिखा था कि 'भारत में तीन मनुष्य एक साथ मिलकर पाँच मिनट के लिए भी कोई काम नहीं कर सकते हैं।' वे कहा करते थे कि 'हमारे स्वभाव में संगठन का सर्वथा अभाव है, पर इसे हमें अपने स्वभाव में लाना है।' यदि हमें भारत को महान बनाना है और उसका भविष्य उज्ज्वल बनाना है तो इसके लिए आवश्यकता है संगठन की और बिखरी हुई इच्छा शक्ति को एकत्र लाने की। हमें ऋग्वेद की ऋचा 'संगच्छध्वं संवदध्वम् संवोमनांसिजानताम्' की भावना से काम करना होगा। उनका दृढ़ विश्वास था कि

MV_Jan_2017_Q7:Layout 1 12/14/2016 11:34 AM Page 20

कोई सेवाभावी संगठन ही संपूर्ण भारत को संगठित कर पाएगा।

भक्ति

स्वामी विवेकानंद जी का यह मानना था कि राष्ट्रोत्थान के लिए शक्ति के साथ भक्ति भी अनिवार्य है। उनका जोर दो प्रकार की भक्ति पर था– ईश्वर भक्ति ओर भारत भक्ति।

ईश्वर भक्ति

उनका विश्वास था कि ईश्वर के प्रति पूर्ण निष्ठा रखते हुए धर्म, संस्कृति और अध्यात्म का सहारा लेकर ही हम अपना काम पूर्ण कर सकते हैं। भारत का प्राण तत्त्व एवं आत्म तत्त्व है- धर्म और संस्कृति। यदि भारत का उत्थान होना है तो इसे ही आधार बनाना होगा। इसे छोड़कर किया जाने वाला कोई भी काम न तो हमें स्वीकार्य है और न ही वह हमारे लिए फलदायी हो सकता है। वे आग्रहपूर्वक यह बात कहा करते थे कि हमें पाश्चात्य भौतिकतावाद के चक्कर में पड़कर अपने धर्म और अध्यात्म को भुला नहीं देना है। इस संबंध में उनका कथन है - 'स्मरण रखो यदि तुम पाश्चात्य भौतिकवादी सभ्यता के चक्कर में पड़कर आध्यात्मिकता का आधार त्याग दोगे तो उसका परिणाम होगा कि तीन पीढ़ियों में तुम्हारा राष्ट्रीय अस्तित्त्व मिट जाएगा क्योंकि राष्ट्र का मेरुदंड टूट जाएगा। इसका परिणाम होगा सर्वतोमुखी सत्यानाश।'

राष्ट्र भक्ति

ईश्वर भक्ति के साथ-साथ स्वामीजी देशभक्ति, राष्ट्रभक्ति और भारतभक्ति को भी उतना ही आवश्यक मानते थे। इसीलिए तो उन्होंने यहाँ तक कहा था कि आगामी कुछ वर्षों के लिए हमें सब देवी-

गर्व से कहो कि मैं भारतवासी हूँ, प्रत्येक भारतवासी मेरा भाई है। ब्राह्मण भारतवासी, अज्ञानी भारतवासी, दरिद्र-पीड़ित-वंचित भारतवासी सभी मेरे भाई हैं। भारत का समाज मेरे बचपन का झूला, जवानी की फुलवारी और बुढ़ापे की काशी है। बोलो भाई बोलो कि भारत की मिट्टी मेरा स्वर्ग है और भारत के कल्याण में ही मेरा कल्याण है।

देवताओं को भूलकर एक ही देवी की आराधना करनी चाहिए और वह है भारत माता। हमारे किसी भी काम की सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण कसौटी यह होनी चाहिए कि उससे भारत का हित हो। मेरी संपूर्ण शक्ति, बुद्धि, योग्यता भारत की प्रगति में काम आए। वे भारत के लोगों में अपने देश के प्रति स्वाभिमान का भाव जगाने के लिए कहा करते थे कि भारत में जन्म लेने के कारण लज्जित मत होओ वरन् गौरव का अनुभव करो। दूसरे देशों से हमें कुछ लेना है अवश्य, पर दुनिया को देने के लिए हमारे पास इन देशों से सहस्र गुना अधिक है। भारत के साथ अपना तादात्मय स्थापित करते हुए उन्होंने कहा था– 'मैं घनीभूत भारत हूँ।' भारत के प्रति इस प्रकार की भावना के कारण ही जब वे विदेश यात्रा से लौटकर भारत के समुद्र तट पर उतरे तो दौड़कर सर्वप्रथम भारत की मिट्टी में लोटपोट हो गए। उनके स्वागत में माला थामे हुए और जय-जयकार करते हुए लोग यह दृश्य देखकर आश्चर्यचकित हो गए। ऐसा करने का कारण पूछने पर स्वामीजी ने कहा कि इतने वर्षों तक विदेश में रहने के कारण मैं भारत माँ के आँचल से दूर रहा, आज फिर से माँ के आँचल

MV_Jan_2017_Q7:Layout 1 12/14/2016 11:34 AM Page 21

में लिपट कर मैं धन्य हो गया, पवित्र हो गया। ऐसी थी उनकी भारत भक्ति। अपने एक संदेश में उन्होंने कहा था- 'गर्व से कहो कि मैं भारतवासी हूँ, प्रत्येक भारतवासी मेरा भाई है। ब्राह्मण भारतवासी, अज्ञानी भारतवासी, दरिद्र-पीड़ित-वंचित भारतवासी सभी मेरे भाई हैं। भारत का समाज मेरे बचपन का झूला, जवानी की फुलवारी और बुढ़ापे की काशी है। बोलो भाई बोलो कि भारत की मिट्टी मेरा स्वर्ग है और भारत के कल्याण में ही मेरा कल्याण है।'

युक्ति

किसी भी देश के समुचित विकास के लिए नीति-रणनीति, तकनीक-तकनोलॉजी एवं प्रबंधन का भी महत्त्वपूर्ण स्थान होता है। विज्ञान के क्षेत्र में महत्त्वपूर्ण प्रगति हुई है, हम उससे अछूते नहीं रह सकते। इसीलिए स्वामी विवेकानंद जी कहा करते थे कि हमें अपने देश के लोगों विशेषकर नौजवानों को विज्ञान की शिक्षा देनी चाहिए। कृषि एवं उद्योग दोनों क्षेत्रों में उपयुक्त तकनोलॉजी अपनाकर इन क्षेत्रों में उत्पादन बढ़ाया जाना चाहिए। विज्ञान एवं तकनोलॉजी के क्षेत्र में नए-नए अनुसंधान किए जाने चाहिएँ। स्वामीजी का मानना था कि अब समय आ गया है जब हमें विज्ञान एवं धर्म, भौतिक समृद्धि एवं आध्यात्मिक उन्नति तथा पश्चिम एवं पूर्व के बीच समुचित समन्वय बनाना चाहिए। इतिहास साक्षी है कि सब प्रकार के संसाधन होने के बावजूद आधुनिक तकनीक-तकनोलॉजी एवं उचित प्रबंधन के अभाव में हम अपेक्षित प्रगति नहीं कर पाए। यहाँ यह बात भी ध्यान में रखनी होगी कि भारत में पारंपारिक तकनीक-तकनोलॉजी का प्रचुर भंडार हैं। इसमें आवश्यक संशोधन कर युगानुकूल बनाना होगा और विश्व में विकसित तकनीक व तकनोलॉजी को देश की परिस्थिति के अनुसार परिवर्तित कर अपनाना होगा। आज के विज्ञान, तकनीक व तकनोलॉजी का गलत उपयोग न हो और पर्यावरण तथा देश के सांस्कृतिक जीवन मूल्यों को नुक्सान न पहुँचाए, इसके लिए इसे आध्यात्मिक धरातल के साथ जोड़कर रखना होगा।

गति

स्वामीजी का मानना था कि विकास की दौड़ में भारत पिछड़ गया है, अतः हमें अधिक गति से काम करना होगा। इसके लिए चरित्रवान-संस्कारवान मनुष्यों की एक सबल-सक्रिय कार्यशक्ति खड़ी करनी होगी। इसीलिए स्वामीजी कहा करते थे कि यदि मुझे संस्कारवान और पूर्ण मनोभाव से काम करने वाले कुछ सौ परिश्रमी नौजवान मिल जाएँ तो मैं देश का चित्र बदल सकता हूँ। इस संबंध में उनका यह कथन ध्यान देने योग्य है- 'हमें चाहिएँ प्रज्ञावान, वीर और तेजस्वी युवक जो मृत्यु से आलिंगन करने का और समुद्र को लाँघ जाने का साहस रखते हों। सिंह के पौरुष से युक्त, परमात्मा के प्रति अटूट निष्ठा से सम्पन्न और पावित्र्य की भावना से उद्दीप्त सहस्रों नर-नारी दरिद्रों व उपेक्षितों के प्रति हार्दिक सहानुभूति लेकर देश के एक कोने से दूसरे कोने तक भ्रमण करते हुए मुक्ति का, सामाजिक पुनरुत्थान का सहयोग और समता का संदेश देंगे।' स्वामीजी का यह भी आग्रह रहता था कि समाजोत्थान और समाजसेवा यह काम किसी भी प्रकार की बाधाओं व कठिनाइयों की परवाह न कर बिना रुके, बिना झुके सतत चलते रहना चाहिए। अपने इस भाव को वे इस प्रकार प्रकट किया करते थे-

'उत्तिष्ठत जाग्रत प्राप्यवरान्निबोधत' अर्थात् उठो, जागो और लक्ष्य प्राप्ति तक रुको मत। आज समय आ गया है कि स्वामीजी के इस संदेश को हृदयंगम कर हम पूर्ण मनोयोग से राष्ट्रोत्थान के काम में लग जाएँ।

लेखक प्रसिद्ध समाजशास्त्री एवं अर्थशास्त्री हैं।

MV_Jan_2017_Q7:Layout 1 12/14/2016 11:34 AM Page 22

भारत की संस्कृति धर्म, इतिहास, समाज और भाषा को नीचा दिखाने और उसे नष्ट-भ्रष्ट करने के षड्यंत्र यों तो विदेशी आक्रमणों के साथ ही शुरू हो गये थे, परंतु स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद इन षड्यंत्रों में जिस प्रकार तीव्रता आई है वह चौंकाने वाली है। भारत में चल रहे ये षड्यंत्र अंतरराष्ट्रीय स्तर पर चर्च, बहावियों-जिहादियों और कम्युनिस्टों द्वारा चलाए जा रहे सुनियोजित षड्यंत्रों का हिस्सा हैं। इसके तहत लेखकों, पत्रकारों, इतिहासकारों, मजबही प्रचारकों, भाषाविदों, कलाकारों आदि का भरपूर इस्तेमाल किया जाता है। जवाहर लाल नेहरू विश्वविद्यालय में 'भारत की बर्बादी तक जंग लड़ने' के नारे इसी कुत्सित मुहिम का हिस्सा हैं। आजादी के बाद नेहरू मंत्रिमंडल से ही इसकी शुरूआत हो गई थी और बाद में इंदिराजी के शासनकाल में तो नुरुल हसन के शिक्षामंत्री बनते ही शिक्षण संस्थानों, कलाकेंद्रों और साहित्यिक-सांस्कृतिक प्रतिष्ठानों में भारतीय समाज विरोधी मानसिकता के तथाकथित विद्वानों को ढूंढ़-ढूंढ़ कर नियुक्त किया गया। प्रस्तुत है समाज विरोधी इस अंतरराष्ट्रीय षड्यंत्र पर चौकाने वाले रहस्यों को उजागर करता वरिष्ठ लेखक आनन्द आदीश का दो खंडों में यह लेख।

MV_Jan_2017_Q7:Layout 1 12/14/2016 11:34 AM Page 23

हिंदू-विद्वेष : निवेशन, निहितार्थ एवं निदान

आजकल हिंदुओं के विरुद्ध विष-वमन की बाढ़ आई हुई है। हिंदुओं का वैकल्पिक इतिहास (The Hindus: An Alternative History) लेखन निम्नतम स्तर तक सिमट कर काम-वासना पर केंद्रित हो गया है जिसका सार-संक्षेप इस प्रकार है:

- शिवलिंग हिंदू देवी-देवताओं की कामुक प्रवृत्ति का प्रमाण है।
- यमी ने अपने भाई यम के साथ यौनाचार का प्रयत्न किया था। (पृष्ठ-123-124)
- चंडिका ने शुंभ-वध यौनोन्माद में किया था। (पृष्ठ-416)
- लक्ष्मण सीता के प्रति कामासक्ति भाव रखते थे। (पृष्ठ-14)
- सूर्य ने कुंती से बलात्कार किया था। (पृष्ठ-245)
- स्वामी विवेकानंद ने शिकागो भाषण के तुरंत बाद गोमांस भक्षण की इच्छा जताई थी। (पृष्ठ-639)
- हिंदू पूजा में नारियल तोड़ना मानव-बलि का अवशिष्ट है। (पृष्ठ-655)
- झाँसी की रानी लक्ष्मीबाई अंग्रेजों के प्रति वफादार थी।
- मंगल पांडेय अफीम, भाँग और शराब का व्यसनी था।
- गांधी जी को नव-युवतियों के साथ शयन करने की आदत थी।
- संपूर्ण हिंदू-इतिहास ऐसे ही प्रसंगों से अटा पड़ा है।

उपर्युक्त पुस्तक की लेखिका एक सांप्रदायिक क्रूसेडर की तरह हिंदू धर्म को कलंकित करने पर तुली है। ज्यौफ्री कृपाल की 'कालीज़ चाइल्ड' (Kali's Child) जैसी हेय पीएच.डी. प्रकल्प की निदेशिका ही नहीं, पॉल कोर्टराईट लिखित 'गणेश :

MV_Jan_2017_Q7:Layout 1 12/14/2016 11:34 AM Page 24

लॉर्ड ऑफ ऑब्सटेकल्स, लॉर्ड ऑफ बिगनिंग्स' (Ganesh: Lord of Obstacles, Lord of Beginnings) जैसे गंदे लेखन की भूमिका लेखिका भी यही है।

इसके विपरीत, किसी हिंदू महिला की तो छोड़िए, कोई घटिया से घटिया हिंदू पुरुष भी ईसा-मसीह की कुँवारी माँ मेरी के चरित्र पर इस प्रकार की टटपूंजिया टिप्पणी करने की हिमाकत करना तो दूर, कल्पना तक भी नहीं कर सकता।

संस्कृति और संस्कारों का यही तो अंतर होता है।

इसी अंतर के कारण वेंडी डोनीजर जैसों द्वारा हिंदुओं के विषय में इतना निम्न कोटि का लेखन किया जा रहा है। और यह पहली बार नहीं हो रहा है और न ही पहली बार भारत या भारत के बाहर पढ़ाया जा रहा है। क्योंकि यह कर्म एक ऐतिहासिक पृष्ठभूमि और सुनियोजित षड्यंत्र का परिणाम है, इस कारण इसका फलक उसी अनुपात में वैश्विक है, जिस अनुपात में गहरी और विस्तृत हैं इसकी जड़ें जो अब्राहम प्रेरित संप्रदायों (यहूदी, ईसाई और इस्लाम) के भटके हुए अनुयायिओं तथा मार्क्स, माओ और लेनिन प्रेरित वामपंथियों (कम्यूनिस्टों) के एकांगी और अधिनायकवादी दर्शन तक पहुँचती हैं। इनकी मान्यता है कि इनके पैगंबर को ही सर्वप्रथम सत्य का साक्षात्कार (अहलाम) हुआ और वही ईश्वरीय है, श्रेष्ठतम है, अंतिम है। क्योंकि उस सिद्धांत में किसी भी सुधार की गुंजायश नहीं है, इस कारण उसमें कोई भी काट-छाँट नाजायज है, बरदाश्त के बाहर है।

इनकी मान्यता यह भी है कि इनके प्रादुर्भाव से पूर्व संसार अज्ञान के अंधकार में डूबा था। अतः या तो कुछ था ही नहीं या जो कुछ था भी, वह कुत्सित था, काला था, कुफ्र था। जो कोई भी इनके मत से भिन्न विचार रखता है, वह यहूदी के अनुसार विधर्मी (Heretic), ईसाई के अनुसार बुतशिकन (Heathen) मुस्लिम के अनुसार काफिर और वामपंथियों के अनुसार बुर्जवा, सांप्रदायिक, (Bourgeois, Communal) है। अतः ऐसे लोगों को या तो जीवित रहने का ही हक नहीं है या फिर वे हिकारत के पात्र हैं। ईसामसीह का सूली पर चढ़ाया जाना, यहूदियों का यरुशलम से और पारसियों का ईरान से हिंसक निष्कासन, जिहाद के नाम पर दुनिया के बड़े भूभाग में क्रूर हिंसाचार तथा लेनिन-स्टॉलिन-माओ द्वारा अपने करोड़ों विरोधियों का निर्मम नर-संहार और माओत्से तुंग द्वारा ड्रेगन शैली में तिब्बत राष्ट्र का भक्षण इसके अकाट्य प्रमाण हैं। नारी के प्रति भी इनके चिंतन में समादर और समभाव का अभाव है। कोई नारी को मात्र भोग्या मानता है, कोई खेत और कोई हाड-माँस की मशीनी अनुयायी। हेलेन ऑफ ट्रॉय के शरीरिक मांसल- सौंदर्य के लिए युद्ध लड़े गए, न कि सतीत्व-रक्षा जैसे किसी उच्चादर्श के लिए। नारी को बुर्के या तीन तलाक के तालों में बंदी या बाँदी बनाकर स्वयं को शेर खाँ समझ लिया गया। कम्यूनिस्टों ने तो नारी को नेतृत्व की प्रथम पंक्ति के नजदीक तक नहीं फटकने दिया। आप दुनिया के फलक पर शायद एकाध भी महिला कम्यूनिस्ट नेता को चिह्नित नहीं कर पाएँगे। दूसरी ओर प्रत्यक्ष व्यवहार में संपूर्ण अरब जगत, अन्यान्य पश्चिम-एशियाई देशों तथा यूरोपीय देशों में समलैंगिकता और बाल यौन-शोषण जैसी विकृतियाँ भी बड़े पैमाने पर पाई जाती हैं, जो इन्हें ग्रीस और यूनान से विरासत में मिली हैं, जिसकी एक झलक रोलेंड वर्नन लिखित, 'स्टार इन दी ईस्ट' (Star in the East) को पढ़ कर भी मिल सकती है।

उपर्युक्त चिंतन और तथ्यों की तुलना में सर्व-समावेशी पुरुषार्थ चातुष्ट्य (धर्म, अर्थ, काम,मोक्ष) आधारित समग्र जीवन दर्शन 'एकं सद् विप्रा बहुधा

MV_Jan_2017_Q7:Layout 1 12/14/2016 11:34 AM Page 25

वदन्ती' (ऋग्वेद 1-164-46) और जैन मत का अनेकांतवाद, जीव मात्र के प्रति बौद्ध करुणाभाव, सिख संप्रदाय की सत् श्री अकाल पुरुख की परिकल्पना और शाकाहार की अधिकाधिक बढ़ती स्वीकार्यता, 'यत्र नार्यस्तु पूज्यंते, रमन्ते तत्र देवता' (मनुस्मृति-3-56) वर्णित नारी सम्मान तथा स्तवन, 'समलैंगिकता और बाल-शोषण जैसे घृणित मनोरोगों तथा गुलाम-प्रथा जैसी अमानवीय प्रथाओं से मुक्त और अनभिज्ञ समाज-जीवन– जिसकी पुष्टि प्रख्यात इतिहासकार ए. एल. बाशम और मार्क्सवादी इतिहासकार डी.डी. कोशाम्बी तक ने भी की है। वसुधैव कुटुम्बकम् (पंचतंत्र) का भाव-जगत्, संपूर्ण जड़-चेतन में एक ही सत्य और सत्ता की प्रतीति तथा अनुभूति और पृथ्वी ही नहीं अंतरिक्ष तक में भी शांतिकामी शैव, वैष्णव, जैन, बौद्ध, सिक्ख आदि का जीवन-दर्शन इन एकांगी संप्रदायों के अहंकारी और अधिनायकवादी कट्टरपंथी मठाधीशों के मन में जहाँ एक ओर ईर्ष्या तथा हीनभावना को जन्म देता है, वहीं कटुता तथा विद्वेष को भी। यह समस्या का मनोवैज्ञानिक पक्ष है जो हिंदू विरोधी वैमनस्यपूर्ण लेखन, पठन-पाठन और प्रचार माध्यमों के कुप्रचार की पृष्ठभूमि में काम करता है। अपनी चपटी नाक को छिपाने के असफल प्रयास में सामने वाले को 'नकटा-नकटा' कह कर शोर मचाने की प्रवृत्ति। इसी कारण भारत विरोधी कागज के इन पुलिंदों को कुत्सित और काल्पनिक इतिहास कहना अधिक सुसंगत होगा जिसके लेखकों के नाम बेशक बदलते रहते हैं, परंतु मंतव्यों और मंसूबों का स्थायीभाव कभी नहीं बदलता।

इनका स्थायीभाव है- जो नहीं घटा, उसे गढ़ लो और ढोल पीट-पीट कर घोषणा करते रहो कि इन धुरंधर विद्वानों ने कितनी बुद्धि और श्रम लगाकर नित-नवीन सत्यों का उद्घाटन किया है, जो सिद्ध करता है कि भारत सदैव ही एक सराय समान देश रहा है, जहाँ बाहर से कभी आर्य, तो कभी मुसलमान; फिर अंग्रेज आदि आक्रमणकारी जातियाँ आती रहीं, जीतती रहीं और शासन करती रहीं। गंगा-जमनी संस्कृति को जन्म देती रहीं। यहाँ मूल संस्कृति या सभ्यता जैसी कोई चीज ही नहीं है। यह विस्तृत भूखंड तो कभी एक राष्ट्र भी नहीं रहा। वेदादि धर्म-ग्रंथ नहीं, गडरियों के गीत हैं। रामायण-महाभारत कोई इतिहास नहीं, काल्पनिक कथा-कहानियाँ हैं जो अतिशयोक्तियों से भरी पड़ी हैं और भोले-भाले लोगों की भावनाओं को भुनाने के इरादे से लिखी गई हैं। हिंदुओं को तो इतिहास लेखन का शऊर तक नहीं था। यहाँ तो सदैव ही मुट्ठी भर शोषक वर्ग ने विशाल अशिक्षित तथा भोले-भाले शोषित वर्ग का खून चूसा है– कभी धर्म की अफीम

नारी के प्रति भी इनके चिंतन में समादर और समभाव का अभाव है। कोई नारी को मात्र भोग्या मानता है, कोई खेत और कोई हाड-माँस की मशीनी अनुयायी। हेलेन ऑफ ट्रॉय के शरीरिक मांसल- सौंदर्य के लिए युद्ध लड़े गए, न कि सतीत्व-रक्षा जैसे किसी उच्चादर्श के लिए। नारी को बुर्के या तीन तलाक के तालों में बंदी या बाँदी बनाकर स्वयं को शेर खाँ समझ लिया गया। कम्यूनिस्टों ने तो नारी को नेतृत्व की प्रथम पंक्ति के नजदीक तक नहीं फटकने दिया। आप दुनिया के फलक पर शायद एकाध भी महिला कम्यूनिस्ट नेता को चिह्नित नहीं कर पाएँगे।

MV_Jan_2017_Q7:Layout 1 12/14/2016 11:34 AM Page 26

खिलाकर, कभी चाँदी के टुकड़े फेंक कर और अधिकतर डरा-धमका कर, मारपीट कर। चूँ-चूँ का मुरब्बा है जी यह देश, जिसे आप भारत कह कर पुकारते हैं।

ईसाई बहुल पश्चिमी देशों यथा अमेरिका, यूरोप आदि से शुरू होकर, कभी साम्यवादी रहे रूस, चीन, अधिसंख्य मुस्लिम बहुसंख्यक पश्चिम एशिया के देशों तथा पाकिस्तान में ही नहीं, भारतवर्ष तक में भी यही पाठ थोड़े-बहुत अंतर से शिक्षण संस्थाओं के माध्यम से ढिंढोरची जन-संचार माध्यमों के सहारे जन-सामान्य को झाँझ-मंजीरे बजा-बजा कर पढ़ाया और रटाया जा रहा है।

नुरुल हसन के कार्यकाल में तो शिक्षण संस्थाओं, कला केंद्रों, साहित्यिक संस्थानों को हिंदू विरोधी कट्टरपंथियों, छद्म-सेक्युलरिस्टों, कम्यूनिस्टों के हवाले कर दिया गया। भाषा, शिक्षा, इतिहास, समाजशास्त्र, अर्थशास्त्र आदि विभागों में छाँट-छाँट कर इसी विचारधारा के लोगों की नियुक्तियाँ की गईं। नवागंतुक नौजवानों का बौद्धिक प्रक्षालन करने के षड्यंत्र के तहत इतिहास गढ़ने और पढ़ाने का योजनाबद्ध क्रम प्रारंभ हो गया। भारत को भारत से विदा करने का, निष्कासित करने का पापाचार प्रारंभ हो चुका था।

पाकिस्तान की सरकारी शिक्षण संस्थाओं और मदरसों के कठमुल्लों ने भद्दी से भद्दी गालियाँ हिंदुओं के लिए आरक्षित कर रखी हैं, जिससे वे अपनी औकात में रहें। मुहम्मद-बिन-कासिम के आक्रमण (सन् 712 ई.) पूर्व के संपूर्ण इतिहास को मानो काली-कूँची से पोत दिया गया है और बाद के इतिहास में भी 'छाँटो-छोड़ो शैली' के अंतर्गत केवल धर्मांध आक्रमणकारियों की गौरव-गाथा ही गाई-सुनाई जा रही है। ज्ञान की किरणों के प्रथम-प्रस्फुटन स्थलों सिंधु-सरस्वती के तीरों पर फूली-फली अद्भुत और उन्नत मोहनजोदड़ो तथा हड़प्पा जैसी नागर सभ्यता का उल्लेख तक उस भाषा या लहजे में भी नहीं किया जाता जिसके अंतर्गत मिस्र तक में वहाँ की पुरातन सभ्यता और संस्कृति के प्रमाण पिरामिड रूपी कब्रगाहों को पर्यटकों को आकर्षित करने के लिए किया जाता है। अमेरिकी संस्था 'इंटरनेशनल सेंटर फॉर रिलीजन एंड डिप्लोमेसी' (International Centre for Religion and Diplomacy) तथा शोधकर्त्ता इवेत क्लेर रोसेर की पुस्तक 'इस्लामाइजेशन ऑफ पाकिस्तानी सोशल साइंस टेक्सट-बुक्स' (Islamization of Pakistani Social Science Textbooks) आँखें खोलने वाली सामग्री इस संबंध में उपलब्ध कराती हैं। और अपने भारत देश की राजधानी दिल्ली सहित देश के विद्यालयों तथा विश्वविद्यालयों में पढ़ाए जा रहे उस वैकल्पिक इतिहास के बारे में तो सुना ही होगा जिसमें शहीद भगतसिंह को एक आतंकवादी और आतंकवादी अफजल को शहीद बताया गया है। वाह रे वामपंथियो और तथाकथित नेहरूवादी सेक्यूलर ढिंढोरचियो! सरकारी खर्चे पानी पर पूरी की पूरी नई पीढ़ी को उसके गौरवशाली सांस्कृतिक राष्ट्रवाद के अधिष्ठान से स्खलित करने के इनके कमाल का कोई सानी नहीं है। 'ग' से गणेश में इन्हें हिंदू सांप्रदायिकता की बू आती है और 'गधा' कहते ही वह सेक्यूलरिस्ट होने का सर्टिफिकेट बन जाता है।

इंदिरा गांधी द्वारा आरोपित आपातकालीन तानाशाही

MV_Jan_2017_Q7:Layout 1 12/14/2016 11:34 AM Page 27

के समर्थन में 'इन द नेम ऑफ डेमोक्रसीः जेपी मूवमेंट एंड इमरजेंसी' (In the Name of Democracy: J.P. Movement and Emergency) जैसी बेशर्म वकालत करती पुस्तक के लेखक बिपिनचंद्र पाल जैसों से राजनीतिक धर्म-निरपेक्षता को ऐतिहासिक धर्म-निरपेक्षता का लबादा पहनाने का फार्मूला इन मानसिक गुलाम वामपंथियों ने अंगीकार किया है। एक बार पुनः स्मरण कर लें कि भगतसिंह को आतंकवादी करार देने वाली और दिल्ली विश्वविद्यालय में पढ़ाई जा रही पुस्तक 'इंडियाज स्ट्रगल फॉर इंडिपेंडेंस' (India's struggle for Indpendence) के लेखक यही महाशय और जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय की मृदुला मुखर्जी आदि हैं। तानाशाही और लोकतंत्र का निकाह कराने का कमाल कोई इनसे सीखे और सीखे हुनर लाखों की रायल्टी बटोरने का तथा फिर भी सर्वहारा के चैम्पियन बनकर प्रायः राज्यसभा टी.वी. सहित अनेक टी.वी. चैनलों पर चर्चित बने रहकर वाह-वाही लूटने का। वैसे इन महामहिम मृदुला मुखर्जियों, इरफान हबीबों, रोमिला थापरों आदि के कदीमी कुनबे के इन हुनरबाज इतिहासकारों की चतुराई की दाद देनी पड़ेगी, जो हमारे भाषाई ज्ञान का यह समझ कर परिष्कार करते हैं कि आतंकवादी का अर्थ समय-समय पर बदलता रहता है। मानो यदि 'महान् आतंकवादी, संत शेखसादी' कहा तो चलेगा। या फिर जे.एन.यू. में अपने अधेड़ युवा चेलों के उन आप्त वचनों को सुनने के लिए ढाबे के निकट क्यारियों की ऊँची-नीची मुंडेर पर उकड़ू बैठने की विनम्रता ओढ़ लेते हैं, जिनमें 'भारत की बर्बादी तक जंग रहेगी, जंग रहेगी' की छाती पीट-पीट कर कसमें खाई जाती हैं।

वसुधैव कुटुम्बकम् का भाव-जगत, संपूर्ण जड़-चेतन में एक ही सत्य और सत्ता की प्रतीति तथा अनुभूति और पृथ्वी ही नहीं अंतरिक्ष तक में भी शांतिकामी शैव, वैष्णव, जैन, बौद्ध, सिक्ख आदि का जीवन-दर्शन इन एकांगी संप्रदायों के अहंकारी और अधिनायकवादी कट्टरपंथी मठाधीशों के मन में जहाँ एक ओर ईर्ष्या तथा हीनभावना को जन्म देता है, वहीं कटुता तथा विद्वेष को भी। यह समस्या का मनोवैज्ञानिक पक्ष है जो हिंदू विरोधी वैमनस्यपूर्ण लेखन, पठन-पाठन और प्रचार माध्यमों के कुप्रचार की पृष्ठभूमि में काम करता है।

इसकी शुरुआत कुछ मात्रा में नेहरू मंत्रिमंडल से मौलाना आजाद के शिक्षा मंत्री रहते ही प्रारंभ हो गई थी, परंतु नुरुल हसन के कार्यकाल में तो शिक्षण संस्थाओं, कला केंद्रों, साहित्यिक संस्थानों को हिंदू विरोधी कट्टरपंथियों, छद्म-सेक्युलरिस्टों, कम्यूनिस्टों के हवाले कर दिया गया। भाषा, शिक्षा, इतिहास, समाजशास्त्र, अर्थशास्त्र आदि विभागों में छाँट-छाँट कर इसी विचारधारा के लोगों की नियुक्तियाँ की गईं। नवागंतुक नौजवानों का बौद्धिक प्रक्षालन करने के षड्यंत्र के तहत इतिहास गढ़ने और पढ़ाने का योजनाबद्ध क्रम प्रारंभ हो गया। भारत को भारत से विदा करने का, निष्कासित करने का पापाचार प्रारंभ हो चुका था। उदाहरण के रूप में कवि भूषण रचित 'शिवा बावनी' और श्याम नारायण पांडेय रचित 'हल्दी घाटी' सांप्रदायिक घोषित कर दी गईं। निराला की कालजयी कृति 'राम की शक्ति पूजा' की तुलना में 'वह कूटती थी पत्थर' को इन धुरंधरों ने अधिक ऊँचे दर्जे की

MV_Jan_2017_Q7:Layout 1 12/14/2016 11:34 AM Page 28

साहित्यिक कृति करार दे दिया। महाकवि जयशंकर प्रसाद रचित महाकाव्य 'कामायनी' और 'ध्रुवस्वामिनी' नाटक को तो मानो देश-निकाला ही दे दिया और इनके स्थान पर स्थापित कर दिया अबुल फजल कृत 'अकबरनामा', खफी खां लिखित 'मुंतखब-अल-लुबाब' (आलमगीर औरंगजेब का इतिहास) और राहुल सांकृत्यायन की 'वोल्गा से गंगा' जैसी पुस्तकों को। हमारा कहना यह नहीं है कि इनको नहीं पढ़ाया जाना चाहिए, हमारा उद्देश्य उस मनोवृति की ओर इंगित करना है जिसके अंतर्गत 'हिंदू' शब्द को ही सांप्रदायिकता का पर्यायवाची घोषित किया जा रहा है।

यह त्रासदी हिंदुओं की ही नहीं, प्रकारांतर से मुसलमानों की भी है। उनके प्रतिनिधि के रूप में उदार-चरितों को प्रस्तुत करने के बजाय, कट्टरपंथियों को परोस कर पूरे समाज को उसी साँचे में ढालने की कोशिश की जा रही है। दोनों संप्रदायों को आपस में लड़ाकर, अंग्रेजों की तर्ज पर, अपनी राजनीतिक रोटियाँ सेकी जा रही हैं।

शिक्षा, संस्कृति और कला केंद्रों पर कुंडली मारकर बैठे इन वामपंथियों ने नेहरूवादियों को खूब मूर्ख बनाया है। दोनों हाथों से सरकारी धन-संसाधनों का दोहन ही नहीं, शोषण भी किया है। देश-विदेश में भारत का प्रतिनिधित्व करने के बहाने ऐश तो कर ही रहे हैं, यश भी लूट रहे हैं। ये जो भी ऊट-पटांग लिख या कह रहे हैं, उसी को, इनकी कृपा पर पल रहा संचार माध्यमों का एक बड़ा वर्ग, भारत का सही स्वरूप (Idea of India) बताकर भोले-भाले जन समाज को दिग्भ्रमित कर रहा है।

हिंदुओं का वैकल्पिक इतिहास रच रहे इन तथाकथित इतिहासकारों का यही तो कमाल है कि सरलता से प्रभावित होने वाले युवा मन को हिंदू/भारत-द्वेषी विष को मीठी घुट्टी में मिलाकर इस कौशल से पिलाया

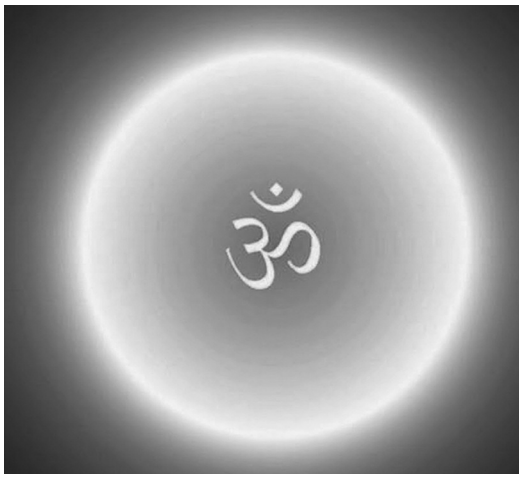

जाता है कि वह जीवन भर उसी की जुगाली करता रहता है। यही वह पड़ाव है जहाँ मुझे उर्दू के जनप्रिय शायर कलीम आजिज की निम्नलिखित पंक्तियाँ गुनगुनाने का मन कर रहा है–

चेहरे पे शिकन नहीं,
और खंजर पर निशां नहीं,
कतल करो हो, के करामात करो हो।

ये करामाती लेखक जिस देश और समाज का वैकल्पिक इतिहास लिख रहे हैं, उसके विषय में इन व्हिटजलों तथा वेंडी डोनीजरों के पूर्वजों और अग्रजों की क्या राय है, उस पर एक विहंगम दृष्टि डाल लें, तो आगे बढ़ें।

सुप्रसिद्ध इतिहाकार डॉ. सतीशचंद्र मित्तल द्वारा तीन खंडों में लिखित खोजपूर्ण ग्रंथ 'इंडिया डिस्टार्टिड' (India Distorted) से हमें ज्ञात होता है कि विश्व-प्रसिद्ध अंग्रेजी कवि/नाट्य लेखक शेक्सपीयर ने भारत को महान् अवसरों की चरम सीमा माना था, तो महाकवि मिल्टन ने भारतीय वैभव को गरिमामयी विशेषण से संबोधित किया था। जर्मन दार्शनिक हीगल की दृष्टि में भारत मनोकामना की भूमि है, तो एडम स्मिथ के आकलन में प्राचीन देशों में सबसे धनाढ्य।

MV_Jan_2017_Q7:Layout 1 12/14/2016 11:34 AM Page 29

जॉन हॉलवेल के अनुसार भारतीय हिंदुओं के धर्मग्रंथ, ईसाई धर्मग्रंथ ओल्ड टेस्टामेंट (Old Testament) आदि की तुलना में सृष्टि और सामाजिक संरचना के विकास का अधिक वैज्ञानिक और प्रभावी विवेचन करते हैं। विश्व उत्पत्ति के सिद्धांतों को मानव जाति ने मिस्रवासियों, यूनानियों या रोमवासियों से नहीं बल्कि हिंदू सिद्धांतों से प्राप्त किया है।

कुरो फोर्ड ने 1790 में ही स्वीकार कर लिया था कि भारत, न कि मिस्र या यूनान विद्याओं और विज्ञान का मूल स्थान है और हिंदू एक अत्यंत सुसभ्य तथा सुसंस्कृत राष्ट्र। फ्रांसीसी क्रांति के महान् अग्रदूत वाल्तेयर ने भारत को 'विश्व सभ्यता का पालना' बताते हुए घोषणा की थी कि खगोल विद्या, नक्षत्र विद्या, गणित, आत्म-तत्त्वज्ञान, अध्यात्म, विज्ञान आदि हमारे पास गंगा के तटों से आए।

कुरो फोर्ड ने माना कि भारत, न कि मिस्र या यूनान विद्याओं और विज्ञान का मूल स्थान है और हिंदू एक अत्यंत सुसभ्य तथा सुसंस्कृत राष्ट्र। फ्रांसीसी क्रांति के महान् अग्रदूत वाल्तेयर ने भारत को 'विश्व सभ्यता का पालना' बताते हुए घोषणा की थी कि खगोल विद्या, नक्षत्र विद्या, गणित, आत्म-तत्त्वज्ञान, अध्यात्म, विज्ञान आदि हमारे पास गंगा के तटों से आए।

प्रख्यात दार्शनिक इमैनुअल कांट का स्पष्ट मत है कि हिंदू धर्म महान् सात्विकता से परिपूर्ण धर्म है। कोई भी उसमें देवत्व के सिद्धांत को संपूर्ण शुद्ध रूप में प्राप्त कर सकता है, जो विश्व में अन्यत्र कहीं भी उपलब्ध नहीं है।

उसी हिंदू धर्म के महापुरुषों, प्रतीकों, तीज त्योहारों के विषय में वयोवृद्ध महिला वेंडी डोनीजर जब यह लिखती हैं कि होली के त्योहार पर एक दूसरे के ऊपर डाला जाने वाला लाल रंग का पानी खून का संकेत है, हिंदू महिलाओं के माथे पर लगी बिंदी रजस्राव की प्रतीक है तथा श्रीकृष्ण की त्रिभंगी और अर्ध-नारीश्वर मुद्रा समलैंगिक स्वभाव की अभिव्यक्ति है, तो लेखिका की नीयत पर संदेह होना स्वाभाविक है। अपनी पुस्तक के मुख पृष्ठ पर ही श्रीकृष्ण का नग्न गोपिका की घुड़सवारी करते हुए दिखा कर तो लेखिका ने केवल दिमागी दिवालियेपन का ही परिचय नहीं दिया है, अपितु स्वयं को कामातुर मनोरोगियों की पंक्ति में भी ला खड़ा किया है। यह महिला स्वयं को शिकागो (अमेरिका) के एक विश्वविद्यालय के दैवी (Divine) विभाग की सहायक प्राध्यापिका बताती है, जिनका एक अघोषित कार्य ईसाई मत की श्रेष्ठता साबित करना भी है। इसी कारण इस आशंका को बल मिलता है कि पुस्तक लिखने के पीछे एक उद्देश्य सांप्रदायिक भी है, जिसकी कुछ झलक उसकी 2013 में प्रकाशित एक अन्य पुस्तक 'ऑन हिंदूइज्म' (On Hinduism) में भी मिलती है।

अमेरिकी चर्च प्रेरित, पालित, पोषित तथाकथित भारतविद्-ईसाई कितनी ही बार तो हिंदू तानाबाना और नाम तक धारण कर हिंदू-द्रोह कर्म में रत पाए गए हैं। इनमें पॉल हैकर, अगेहानंद सरस्वती (असली नाम है लियोपोल्ड फिशर उर्सूलकिंग), रामबचन, रिचर्डकिंग आदि जिनके भारत में सक्रिय हरावल दस्तों में 'व्हाई आई एम नॉट ए हिंदू' (Why I Am Not a Hindu) जैसी समाज तोड़क पुस्तक के लेखक कांचा इलियाह और बरसों तक अहमदाबाद को केंद्र बना कर, मानवाधिकारी कार्यकर्ता के चोले में मिशनरी गतिविधियों में संलग्न सेड्रिक प्रकाश, जो

MV_Jan_2017_Q7:Layout 1 12/14/2016 11:34 AM Page 30

अब ईराक-सीरिया की ओर कूच कर गया है, प्रमुख माने जाते हैं। लगता है ये भद्रजन, विलियम कैरी (1761-1834) नामक कुख्यात मिशनरी लिखित पुस्तक 'मींस फार द कंवर्जन ऑफ दि हीदंस' (Means for the Conversion of the Heathens) का अक्षरशः अनुपालन कर रहे हैं।

वास्तव में भारत के विश्ववंदनीय आध्यात्मिक, सांस्कृतिक इतिहास को विकृत करने के प्रयत्न में यूरोपीय प्राच्यविद् नामधारक इन इतिहासकारों की एक लंबी कतार भारत में अंग्रेजी राज्य के समय से ही सक्रिय रही है। इनमें साम्राज्यवादी अलमबरदारों के अतिरिक्त बहुत बड़ी संख्या ईसाई मिशनरियों की भी है। सर विलियम जोंस, एच.एच. विल्सन, जेम्स मिल, लॉर्ड मैकाले, चार्ल्स ग्रांट, विलियम विल्बर फोर्स, टॉड, डफ कनिंघम आदि में एकाध को छोड़कर सभी ईस्ट इंडिया कंपनी के कर्मचारी थे, जिनकी पहली वफादारी ईमानदार इतिहास-लेखन कर्म के प्रति न होकर, ब्रिटिश साम्राज्य की नीवँ सुदृढ़ करना तथा उसकी निरंतरता बनाए रखने के लिए धर्मांतरण द्वारा भारत को एक ईसाई देश बनाना था। शासकीय अहंकार भाव से ग्रस्त क्लाइव से लेकर डलहौजी और केनिंग तक तथा रोबर्ट ओर्मे से लेकर मैलिशन, मैकाले तक की आँखों में भारत का गौरवशाली इतिहास, धर्म, संस्कृति, भाषा, दर्शन, साहित्य आदि बालू सम कड़कते रहे हैं। उन्होंने इन्हें कलुषित करने का खेल कभी छद्म ढंग से तो कभी खुल कर खेला। आर्यों के आदि देश की कोरी कल्पना को सत्य का लबादा उढ़ा कर पढ़ाना और प्रचारित करना, हिंदू और मुसलमान को आपस में लड़ाना; बौद्ध, जैन, सिक्ख आदि को ही नहीं, वनवासियों, दलितों, पिछड़ों को भी मूल हिंदू धारा से भिन्न विरोधी सिद्ध करने की धूर्ततापूर्ण कोशिश करना, जिससे उन्हें धर्मांतरित कर ईसाई बनाने में सुविधा रहे, उस षड्यंत्र के नग्नतम उदाहरण हैं।

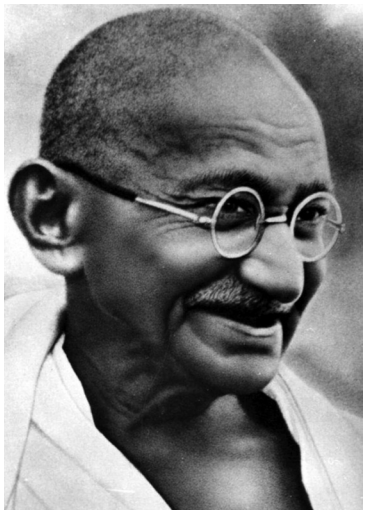

केथेराइन मेयो की पुस्तक घोर साम्राज्यवादी, जातिवादी तथा भारत द्वेषी है। किसी सफाई इंस्पेक्टर द्वारा हमारी गंदी नालियों पर प्रस्तुत की गई अतिरंजित रिपोर्ट से भी घटिया किस्म की है।

सन् 1927 में 'मदर इंडिया' (Mother India) नामक भ्रमित करने वाली पुस्तक की लेखिका केथेराइन मेयो (Catherine Mayo) का नाम पुरानी पीढ़ी के भारतीय अभी भी नहीं भूले हैं। उसने न केवल भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन की खिल्ली उड़ाई थी, अपितु भारतीय महिलाओं, दलितों, पशु-पक्षियों आदि पर वायावी अत्याचारों को मनगढ़ंत किस्से-कहानियों के माध्यम से प्रचारित भी किया था। राष्ट्रीय नेताओं का चरित्र-हनन करने का प्रयत्न किया था और भारतीय पुरुषों, महिलाओं तथा जवान लड़कियों को चरित्रहीन सिद्ध करने के लिए आधारहीन व अपमानजनक प्रमाण गढ़े थे। महात्मा गांधी जैसे सहनशील और क्षमाशील महामानव तक इस बकवास

MV_Jan_2017_Q7:Layout 1 12/14/2016 11:34 AM Page 31

को बर्दाश्त नहीं कर पाए थे। उन्होंने अपनी संयत भाषा में प्रतिक्रिया व्यक्त की थी- 'पुस्तक घोर साम्राज्यवादी, जातिवादी तथा भारत द्वेषी है। किसी सफाई इंस्पेक्टर द्वारा हमारी गंदी नालियों पर प्रस्तुत की गई अतिरंजित रिपोर्ट से भी घटिया किस्म की है।'

इस पुस्तक के विरोध में देश-विदेश में 50 से भी अधिक पुस्तकें और पैम्फलेट प्रकाशित कर, आहत भारतीयों ने अपनी अस्मिता पर चोट करने वाली उस महिला के झूठ का भंडाफोड़ पराधीनता के उस काल में भी किया था।

मेयो से भी 10 वर्ष पूर्व 1917-18 में इंग्लैंड के एक प्रसिद्ध नाट्य लेखक, प्रस्तोता, समालोचक, पत्रकार विलियम आर्चर ने, जो जॉर्ज बर्नार्ड शॉ के घनिष्ठ मित्रों में से था, 'इंडिया एंड द फ्यूचर' (India and The Future) नामक पुस्तक लिख मारी थी, जिसमें आर्चर ने भारत की महान् से महान् उपलब्धियों– दर्शन, धर्म, चित्रकला, मूर्तिकला, वेद, उपनिषद्, रामायण, महाभारत आदि को घटिया दर्जे की बता कर संपूर्ण हिंदू इतिहास को ही अवर्णनीय बर्बरता का एक घृणास्पद स्तूप करार दे डाला था, जिसे पढ़कर पुदूचेरी में एकांत साधना में रत योगिराज अरविंद भी शालीन टिप्पणी करने से स्वयं को न रोक पाए थे। उन्होंने कहा था- 'भारत में कोई सभ्यता थी या नहीं, अथवा है या नहीं, अब विवादास्पद नहीं है, क्योंकि जिन लोगों के मत का कोई मूल्य है वे सभी यह स्वीकार करते हैं कि यहाँ एक ऐसी विशिष्ट एवं महान् सभ्यता सदैव विद्यमान थी जो अपने स्वरूप में अद्वितीय थी। उस प्रसिद्ध नाट्य समालोचक आर्चर ने अपने सुरक्षित एवं स्वाभाविक कार्यक्षेत्र (नाटक) को छोड़कर, ऐसे क्षेत्र में टांग अड़ाई है जिसके संबंध में कुछ कहने का उसका मुख्य आधार है केवल निम्न कोटि का दंभपूर्ण घोर अज्ञान।'

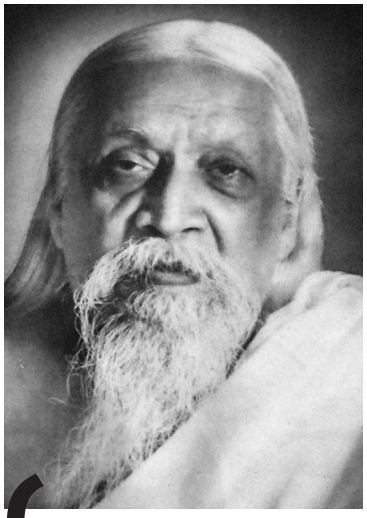

"भारत में कोई सभ्यता थी या नहीं, अथवा है या नहीं, अब विवादास्पद नहीं है, क्योंकि जिन लोगों के मत का कोई मूल्य है वे सभी यह स्वीकार करते हैं कि यहाँ एक ऐसी विशिष्ट एवं महान् सभ्यता सदैव विद्यमान थी जो अपने स्वरूप में अद्वितीय थी।

वैसे विलियम आर्चर की कुटिल और कटाक्षपूर्ण पुस्तक का सटीक तथा तर्क पूर्ण उत्तर देने के लिए हमें सर्वाधिक आभारी जिस विचारक का होना पड़ेगा उसका नाम जॉन उड्रोफ उपाख्य आर्चर आवलोन (John Woodroffe alias Archur Avalon) है। तत्त्व विज्ञान के विश्वविख्यात ज्ञाता उड्रोफ ने भारतीय सभ्यता और संस्कृति के मर्म के महत्त्व को रेखांकित करने के उद्देश्य से, इस पर मंडराते संकट से सावधान करने के लिए और, ईश्वर कभी न करे, इसके विनाश की स्थिति में संपूर्ण मानव सभ्यता पर टूट पड़ने वाले कहर की विभीषिका के प्रति जागरूक रहने की प्रेरणा देने के उद्देश्य से 'इज इंडिया सिविलाइज्ड' (Is India Civilized) नामक अत्यंत गंभीर ग्रंथ हम लोगों को 1924 में दिया था। उड्रोफ लिखित 'द सर्पेंट पॉवर' (The Serpent

MV_Jan_2017_Q7:Layout 1 12/14/2016 11:34 AM Page 32

Power) तो तंत्र विज्ञान का एक प्रामाणिक संदर्भ ग्रंथ माना जाता है। इस लेख के दूसरे भाग में समापन तक पहुँचते-पहुँचते संभवतः मैं उड्रोफ की ओर एक बार पुनः लौटूँगा।

वास्तव में चर्च की कारगुजारियों के चलते ईसाई मत, वहाबी जिहादी कट्टरवाद की जकड़ के चलते इस्लाम और धूर्तता के चलते मार्क्सवाद, लचीलेपन की दृष्टि से कंगाली के कगार पर पहुँच गए लगते हैं। बजाय इसके कि ये आत्म-मंथन करते, समय बीतने के साथ अधिकाधिक असहिष्णु होते नजर आते हैं। लगता है अपने अस्तित्व की लड़ाई लड़ रहे हैं। स्वयं पर ही नहीं, इन्हें अपनों पर भी भरोसा नहीं रह गया है। अन्यथा ये तीनों ही मठ किसी न किसी समय अत्यंत बलशाली तथा विश्वव्यापी सत्ता के केंद्र रहे हैं। यूरोपीय देशों के नाम से चर्च का दुनिया भर में दबदबा अभी कल की ही तो बात है। पोप की तूती राजदरबारों तक में बोलती थी। राजे-महाराजे उसके सम्मुख गिड़गिड़ाते थे, काँपते थे। इसी प्रकार इस्लाम के खलीफा का रौब और रुतबा कौन नहीं जानता। वामपंथ तो दुनिया की दो महाशक्तियों में से एक सोवियत रूस द्वारा ही जाना जाता था। आज तीनों की कितनी खस्ता हालत है, यह किसी से भी नहीं छुपा है; स्वयं इनको इसका अहसास न हो, यह तो संभव ही नहीं है। परंतु यही तो विडंबना है कि बजाय अंतर्मुखी होकर आत्मावलोकन करने के, ये तीनों ही उस हिंदू धर्म को अपने निशाने पर रख रहे हैं, शत्रु क्रमाँक-1 मान कर चल रहे हैं, जिसका सनातन वैश्विक-दर्शन केवल भारत की ही नहीं संपूर्ण संसार की एकमात्र आशा है, क्योंकि वह किसी पूजा पद्धति का नहीं; जीवन मूल्यों का पर्याय है। वे जीवन मूल्य, जिनके अभाव में मानव जाति का पशु से पृथक वैशिष्ट्य सुरक्षित रह पाना असंभव है–

धृति क्षमा दमोऽस्तेयं शौचमिन्द्रिय निग्रहः।
धीर्विद्या सत्यमक्रोधो दशकं धर्मलक्षणम्।।

मनुस्मृति-6-92

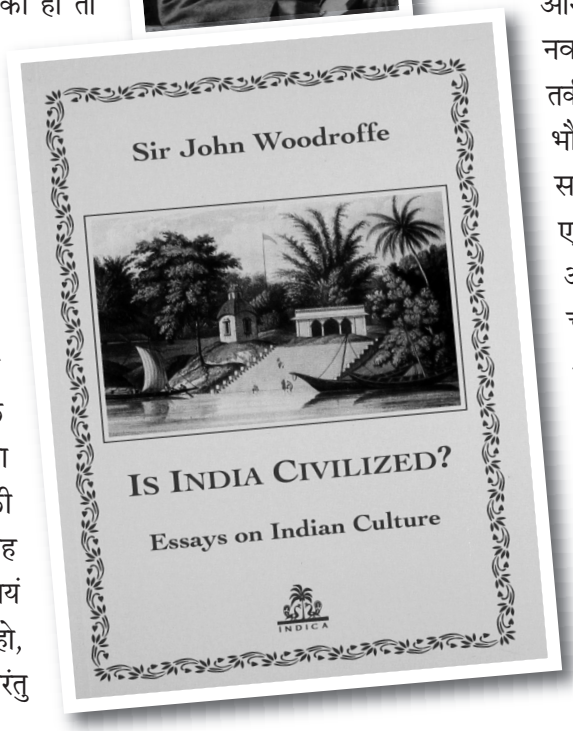

हिंदुत्व को चुनौती देनी ही थी तो आध्यात्मिक धरातल पर देनी चाहिए थी, न कि ओछे राजनीतिक स्तर पर, जैसा कि विलियम आर्चर ने किया और कहा भी– विश्व का नवनिर्माण केवल तर्कवादी और भौतिकतावादी यूरोपीय सभ्यता की रीति-नीति एवं विधि-विधान के अनुसार ही होना चाहिए। यदि भारत अपनी सभ्यता से चिपका रहा, इस सभ्यता की आध्यात्मिक प्रेरणा को प्रेम से पालता रहा, उसके प्रति आसक्त बना रह तो वह तार्किक और

MV_Jan_2017_Q7:Layout 1 12/14/2016 11:34 AM Page 33

युक्तिवादी जगत का एक प्रबल प्रतिद्वंद्वी बनकर उसको अप्रतिम चुनौती देता रहेगा। अतः उसे या तो पूरी तरह पश्चिमी रंग में रंग लेना चाहिए, या फिर उसके संपूर्ण सांस्कृतिक-आध्यात्मिक अधिष्ठान को झूठ से, फरेब से, छल से, कपट से, जैसे भी हो लांछित और कलंकित कर ध्वस्त करने की जुगत करनी चाहिए।

हिंदू विद्वेष के पीछे छिपे इस राजनीतिक छलावे की अधिक विस्तार से चर्चा थोड़ी देर बाद करेंगे। तब तक 'श्रीमद्भागवत् सुधा-सागर' में वर्णित शुकदेव जी के जीवन से संबंधित एक लघु-कथा यह जानने के उद्देश्य से उधार ले लेते हैं कि इसमें सांकेतिक भाषा में वर्णित अलौकिक अनुभूतियों और अतींद्रिय अभिव्यक्तियों के संबंध में वेंडी डोनिजरों और रोमिला थापरों का कुनबा 'हिंदुओं के वैकल्पिक इतिहास' के अंतर्गत क्या कहेगा?

महाभारत के रचयिता कृष्णा द्वैपायन व्यास जी के बाल-ब्रह्मचारी पुत्र मुनिवर शुकदेव जी बड़े योगी, समदर्शी, भेदभाव रहित, निरंतर एकमात्र परमात्मभाव में ही स्थित रहते थे। दिगंबर अवस्था में एक स्थान से दूसरे स्थान पर विचरण करते, गृहस्थों के घरों के दरवाजे के बाहर भिक्षाटन के लिए भी उतनी ही देर ठहरते थे जितनी देर में एक गाय दुही जाती है। व्यवहार से मूढ़ जैसे प्रतीत होते थे। व्यास जी प्रायः उन्हें इधर-उधर ढूँढ़ते रहते थे। एक दिन वन की ओर जाते हुए, अपने पुत्र का पीछा करते हुए व्यास जी ने देखा कि नग्नावस्था में घूम रहे पुत्र शुकदेव जिस सरोवर के पास से गुजरे थे उसमें कुछ वनवासी नारियाँ निर्वसन स्नान कर रही थीं। शुकदेव जी को देखकर उन स्त्रियों ने कोई प्रतिक्रिया व्यक्त नहीं की थी, परंतु दूर से ही, व्यास जी को सरोवर की ओर आता हुआ देखते ही लज्जावश तुरंत वस्त्र धारण कर लिए थे। जब व्यास जी ने उनसे इस दुहरे व्यवहार का कारण पूछा तो उन महिलाओं का उत्तर था– 'आपकी दृष्टि में अभी भी स्त्री-पुरुष का भेद बना हुआ है, परंतु आपके पुत्र की शुद्ध दृष्टि में यह भेद नहीं है।'

भारतीय संस्कृति को नष्ट-भ्रष्ट करने के षड्यंत्र किस प्रकार रचे गए, उसका एक उदाहरण है विलियम आर्चर का यह कथन - 'यदि भारत अपनी इस सभ्यता की आध्यात्मिक प्रेरणा को प्रेम से पालता रहा, उसके प्रति आसक्त बना रह तो वह तार्किक और युक्तिवादी जगत का एक प्रबल प्रतिद्वंद्वी बनकर उसको अप्रतिम चुनौती देता रहेगा।'

कथा समाप्त हो गई है और तीनों तिलंगों की प्रयोगशालाओं के निष्कर्ष भी आ चुके हैं। परिणाम स्वरूप चर्च के मिशनरी इन दीन-हीन नग्न महिलाओं को धर्मांतरित करने के लिए थैलों में अकूत धन लेकर निकल पड़े हैं; जिहादी वहाबी उन 'बेशर्म औरतों' को तुरंत बुरका ओढ़ने के लिए धमका रहे हैं और सेक्युलरिस्ट-कम्यूनिस्ट अपने मुस्टंडों को समझा रहे हैं कि वे नग्न महिलाएँ ही तो भारत के तंत्राधारित वास्तविक इतिहास और संस्कृति का असली प्रतिनिधित्व करती हैं, न कि वेदाचार्य व्यास या उनका निखट्टू, ढोंगी, निरक्षर बेटा शुकदेव।

अब पाठकगण ही बताएँ कि, बतर्ज आमिर खान की फिल्म 'लगान', 127 करोड़ भारतवासी बौद्धिक प्रतिकार के लिए क्योंकर न जगें, कैसे...न ...उठें!!!!!

(शेष अगले अंक में .....)

लेखक चिंतक और वरिष्ठ साहित्यकार हैं।

MV_Jan_2017_Q7:Layout 1 12/14/2016 11:34 AM Page 34

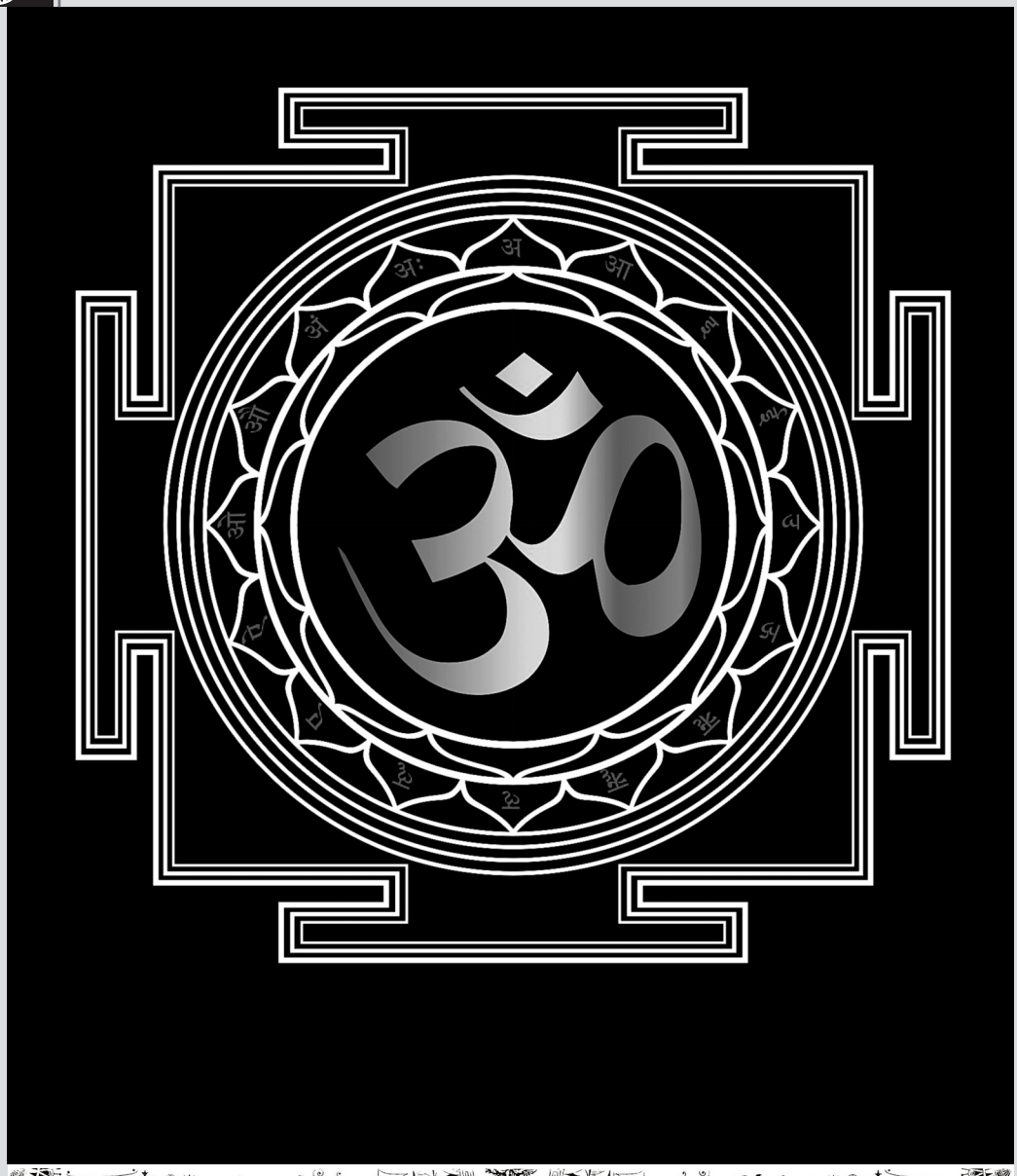

भारतीय भाषाओं एवं सृजन की अविच्छिन्न परंपरा रही है, लेकिन कीथ व ग्रियर्सन जैसे विदेशी विद्वानों ने इस एकात्मता को नकारते हुए संस्कृत व प्राकृत को अलग-अलग माना है। प्रस्तुत आलेख में डॉ. प्रमोद कुमार दुबे ने विदेशी विद्वानों के षड्यंत्रों को उजागर करते हुए भारतीय भाषाओं की एकसूत्रता को प्रामाणिकता से प्रस्तुत किया है।

MV_Jan_2017_Q7:Layout 1 12/14/2016 11:34 AM Page 35

डॉ. प्रमोद कुमार दुबे

भारतीय भाषाओं की एकसूत्रता

वैदिक भाषा में संस्कृत और प्राकृत भाषाएँ अभिन्न रूप में घुली-मिली हैं। इनमें परस्पर पूरकता है, उदाहरण के लिए वैदिक ऋचाओं में प्रयुक्त अनुस्वार और अनुनासिक ध्वनियों की परस्पर पूरकता देखी जा सकती है, अनुस्वार संस्कृत की ध्वनि का द्योतन करता है तो अनुनासिक या कहें– चंद्रबिंदु प्राकृत की ध्वनि का द्योतन और स्वयं ब्रह्मनाद ऊँकार में अनुस्वार– म् अन्तर्भूत है एवं अनुनासिक चंद्रबिंदु प्रकट। अनुस्वार ही सूक्ष्म होकर अनुनासिक बन जाता है। चंद्रबिंदु को अर्धमात्रा कहा जाता है, यह नादात्मक ध्वनि है। इससे ज्ञात होता है कि ऊँकार संपूर्ण वर्ण ध्वनियों का मूल स्रोत है, इससे सारी वर्ण ध्वनियाँ निसृत होती हैं और इसी में विलीन हो जाती हैं।

ऊँकार की वागग्नि अकार से निसृत होकर उदात्त, अनुदात्त और स्वरित अथवा ह्रस्व, दीर्घ और प्लुत उच्चारण-क्रम में स्वर और व्यंजन वर्णों का विस्तार करती है। व्यंजन वर्णों में स्पर्श, अंतस्थ, उष्म की अंतक्रिया होती है, जिससे व्यंजन वर्ण बनते हैं। ऊँकार में निहित अकार को संपूर्ण वाग् कहा गया है- अकारो वै सर्वा वाग्। इसलिए ऊँकार के साक्ष्य में ही वैदिक भाषा पर विचार करना चाहिए। इसमें उभय रूप से अनुस्वार और अनुनासिक का रूपांतरण होता रहता है। यही वैदिक और लौकिक भाषाओं का आदि और अद्वैय स्रोत है।

अनुस्वार और अनुनासिक में परस्पर रूपांतरण का एक सुंदर उदाहरण विद्यापति की नाट्य कृति 'गोरख विजय' की भूमिका से लिया जा सकता है, इस भूमिका के विद्वान लेखक डॉ. हरिमोहन मिश्र ने 'गीतगोविंद' के एक गीत के मात्रिक छंद का प्रसंग लेते हुए बताया है कि 'गीतगोविंद' के एकाध गीत ऐसे अवश्य

MV_Jan_2017_Q7:Layout 1 12/14/2016 11:34 AM Page 36

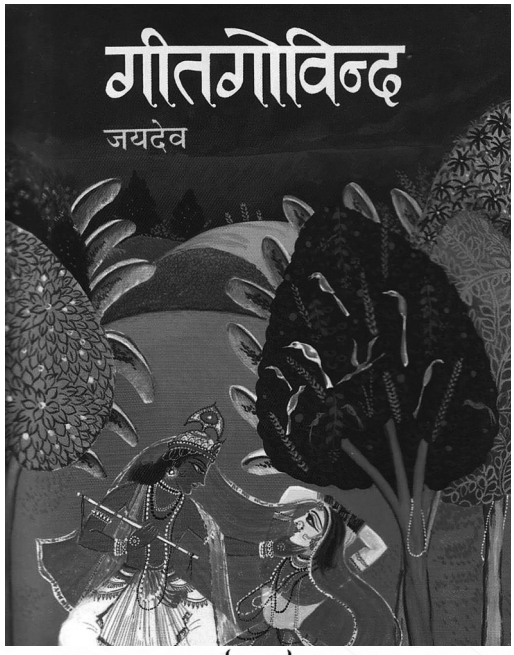

उचित तो यह होता कि संगीत और नाटक से साहित्य का संबंध जानने के लिए नाट्यशास्त्र का सहयोग लिया जाता, जिसका आधार वैदिक यज्ञसंस्था है। नाट्यशास्त्र में प्रयुक्त जग्राह पाठ 'ऋग्वेद' का स्वभाव है, गीत 'सामवेद' का स्वभाव, अभिनय 'यजुर्वेद' का स्वभाव और रसास्वाद 'अथर्ववेद' का स्वभाव। इस समायोजन से ज्ञात होता है कि भारतीय साहित्य में आरंभ से ही पाठ, गीत, अभिनय और रस चारों ही सृजन के अंग रहे हैं। सर्वविदित है कि महर्षि वाल्मीकि कृत रामायण का पाठ्य, गेय और अभिनेय तीनों है। वैदिक यज्ञों में प्रचलित स्वाँग ही लोक नाट्य परंपरा की आदि प्रेरणा है।

हैं, जहाँ संस्कृत भाषा मात्रिक छंद के साँचे में अपने को ठीक से ढाल नहीं सकी है। एक गीत उद्धृत किया जा रहा है–

'श्रितकमलाकुचमण्डल धृतकुण्डलए।
कलितललित वनमाल जय जय देव हरे।।'

की 29 मात्राओं के छंद में 12-6-11 के खंड हैं, किंतु इसी गीत की अंतिम पँक्ति में 12वीं मात्रा के बदले 13वीं मात्रा पर और 6वीं के बदले 7वीं मात्रा पर यति है। जैसे– 'श्रीजयदेव कवेरिदं कुरुते मुदं मंगलमुज्ज्वल गीतः।' यहाँ 'इदं' और 'मुदं' के अनुस्वार को यदि अपभ्रंश की ध्वनि प्रवृत्ति के अनुसार चंद्रबिंदु में अर्थात् 'इदँ' और 'मुदँ' कर दिया जाए तो यति दोष दूर हो जाएगा।' इस उदाहरण से सिद्ध होता है कि अनुस्वार और अनुनासिक ध्वनियाँ परस्पर रूपांतरित होती हैं, साथ ही संस्कृत और प्राकृत में निस्संदेह पूरकता है। यह पूरकता गेय पदों में अधिक मुखर होती है, क्योंकि संगीत में शब्द से अधिक नाद की प्रबलता होती है। शब्द संगीत के स्वरों में टूटते हैं। 'गीतगोविंद' गेय संस्कृत काव्य है लेकिन इसकी गेयता में क्षेत्रीय उच्चारणों की स्वाभाविक छटा होती है।

गीत में लय की प्रधानता होती है, लय सांगीतिक गुण है, संगीत में अनुस्वार अनुनासिक ध्वनि में रूपांतरित होकर अर्धमात्रा बन सकता है। फिर भी कुछ विदेशी विद्वान संस्कृत और प्राकृत के बीच अनुस्वार और अनुनासिक की नीवँ पर भाषा भेद की दीवार खड़ी करते पाए गए। हरिमोहन मिश्र ने एक ऐसे ही विदेशी पेंच को उजागर किया है। उन्होंने लिखा है कि 'ऐसे उदाहरणों के आधार पर ही यह नहीं कहा जा सकता कि गीतगोविन्द की रचना पहले अपभ्रंश में हुई और बाद में संस्कृत में।' वस्तुतः प्राकृत और अपभ्रंश को लेकर काम करने वाले विदेशी विद्वानों ने संस्कृत और प्राकृत के अभिन्न संबंध को काटने का प्रज्ञापराध किया।

MV_Jan_2017_Q7:Layout 1 12/14/2016 11:34 AM Page 37

आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी की पुस्तक 'हिंदी साहित्य का आदिकाल' से ज्ञात होता है कि 'पिशेल ने अन्य प्राकृतों के साथ अपभ्रंश का भी विवेचन किया। बाद में केवल अपभ्रंश को लेकर उन्होंने एक विवेचनात्मक पुस्तक लिखी। भामह और दण्डी (7वीं शती) के समय में अपभ्रंश का साहित्य वर्तमान था, बाद के रुद्रट, राजशेखर, भोज आदि अलंकारिकों ने भी अपभ्रंश की चर्चा की। पिशेल ने 'विक्रमोर्वशीय', 'सरस्वती कंठाभरण', 'वेताल विंशति', 'सिंहासन द्वात्रिंशतिका पुतलिका' और 'प्रबंध चिंतामणि' आदि ग्रंथों में पाए जानेवाले अपभ्रंश पद्यों को तथा 'प्राकृत पैंगलम्' में उदाहरण रूप से उद्धृत कविताओं को ढूँढ निकाला। इसके बाद हरमन याकोबी ने भी अपभ्रंश पर कार्य किया' (पृ. 3-6)। लेकिन, माथा तब ठनकता है जब अपभ्रंश-प्रेम की इस कहानी में संस्कृत और प्राकृत के बीच विभेद का पेंच नाचता दिखाई देता है। भारतीय ज्ञान परंपरा पर अनावश्यक रूप से डारविन का विकासवाद आरोपित करते हुए विदेशी ज्ञानियों ने प्राकृत को पहले की भाषा और संस्कृत को बाद की भाषा सिद्ध करने का प्रयास किया, इसके लिए संस्कृत साहित्य में प्रयुक्त प्राकृत और अपभ्रंश रचनाओं को अलग-अलग करके दिखाया।

क्या ऐसा नहीं होता कि हिंदी का साहित्यकार अपनी रचना में आंचलिक पुट के लिए कहीं लोकभाषा भोजपुरी का प्रयोग कर दे? प्रेमचंद ने अपनी हिंदी रचना 'गोदान' में भोजपुरी गीत 'पिपरा के पतवा सरीखे डोले मनवा' का प्रयोग किया है। यह प्रयोग नया नहीं, नाट्यशास्त्र और संस्कृत साहित्य की परंपरा में और समाज के भाषा व्यवहार में ऐसा ही प्रचलन है। इससे भाषाओं की एकात्मता सिद्ध होती है, न कि कोई दोष।

यह उल्लेखनीय है कि संस्कृत नाटकों में गीतों की रचना संस्कृत में नहीं होती, प्राकृत में होती है, यह

यह सच है कि भरोसे की भाषा तभी बनती है जब वह सत्यनिष्ठ और आत्मीय हो। यदि वेद लोक में नहीं होता तो सब ओर अँधेरा ही होता। लोकजीवन में ही वेद का व्यवहारिक पक्ष स्थापित होता है। वैदिक और लौकिक के अभेद संबंध को शौनक के 'वृहद्देवता' और यास्क के 'निरुक्त' आदि ग्रंथों में देखा जा सकता है। शौनक कहते हैं कि वैदिक को लौकिक बना लेना चाहिए (2.101)। यास्क के अनुसार– 'अर्थवन्तः शब्दसामान्यात्' (नि. 1.5) अर्थात् वैदिक और लौकिक वाक्यों में शब्दों की समानता होने कारण वे मंत्र अर्थ युक्त होते हैं। वस्तुतः अर्थ शब्द पार्थिव का पर्याय है।

प्रयोग कालिदास के नाटकों से आरंभ हुआ। इन प्रयोगों में द्विपदी और चर्चरी को स्थान मिला। 'अभिज्ञान शाकुन्तलम्' की प्रस्तावना में नटी गीत गाती है– अहो रागनिविष्टचित्तवृत्तिरलिखित इव सर्वतो रंगः। 'मेघदूत' में– 'मद्गोत्रांक विरचितपदं गेयमुद्गातु कामा' (उ.मे.-26)। 'विक्रमोर्वशीय' के चतुर्थ अंक में अपभ्रंश गीतों के सोलह प्रयोग मिलते हैं।

भारतीय सृजन की परंपरा को नहीं जानने के कारण अथवा संस्कृत को प्राकृत और अपभ्रंश से काटकर अलग-थलग करने के साजिश के तहत कीथ ने संस्कृत ड्रामा पर लिखते हुए संस्कृत नाटकों में प्रयुक्त गेय पदों को प्रक्षिप्त मान लिया।

'गोरख विजय' नाटक की भूमिका में डॉ. मिश्र ने लिखा है कि 'कतिपय गवेषक प्राकृत, अपभ्रंश, अवहट्ठ की साहित्य- संगीत परंपरा में 'गीतगोविंद'

MV_Jan_2017_Q7:Layout 1 12/14/2016 11:34 AM Page 38

का उद्भव खोजते हैं। पिशेल ने इस परंपरा की ओर संकेत किया।'

उचित तो यह होता कि संगीत और नाटक से साहित्य का संबंध जानने के लिए नाट्यशास्त्र का सहयोग लिया जाता, जिसका आधार वैदिक यज्ञसंस्था है। नाट्यशास्त्र में प्रयुक्त जग्राह पाठ 'ऋग्वेद' का स्वभाव है, गीत 'सामवेद' का स्वभाव, अभिनय 'यजुर्वेद' का स्वभाव और रसास्वाद 'अथर्ववेद' का स्वभाव। इस समायोजन से ज्ञात होता है कि भारतीय साहित्य में आरंभ से ही पाठ, गीत, अभिनय और रस चारों ही सृजन के अंग रहे हैं। सर्वविदित है कि महर्षि वाल्मीकि कृत रामायण का पाठ्य, गेय और अभिनेय तीनों है। वैदिक यज्ञों में प्रचलित स्वाँग ही लोक नाट्य परंपरा की आदि प्रेरणा है। वैदिक यज्ञ काल से आज तक विवाह आदि सांस्कारिक अनुष्ठानों में मंत्रों के साथ गीत और अभिनय प्रचलित है। इन अनुष्ठानों में वेदाचार और लोकाचार दोनों एक साथ होते हैं। क्षेत्रीय विशेषताओं के अनुरूप लोकाचार परिवर्तित होता है, किंतु वेदाचार लगभग एक ही रहता है। इसी पारंपरिक स्रोत से हमारी संस्कृति अग्रसर हुई, आज भी उसमें लोक और शास्त्र एक साथ गतिमान हैं। यही स्थिति भाषा में भी दिखाई देती है।

'वसुधा तलात न रुदेति प्रभातरलं ज्योति'

भूमि से ज्योति नहीं निकलती, धरती ज्योति के लिए सूर्य पर निर्भर है। सूर्य की ज्योति भी धरती के बिना साकार नहीं होती।

भाषा में ही नहीं अपितु व्यवहार में भी वैदिक और लौकिक का अटूट संबंध है। जैसे धरती सूर्य से प्रकाशित है, लोक वेद से भासमान है। कालिदास की पँक्ति है 'वसुधा तलात न रुदेति प्रभातरलं ज्योति' अर्थात् भूमि से ज्योति नहीं निकलती, धरती ज्योति के लिए सूर्य पर निर्भर है। सूर्य की ज्योति भी धरती के बिना साकार नहीं होती। इसी प्रकार वेद को लोक साकार और प्रत्यक्ष बनाता है। वेद ने लोक चित्त को अनुप्राणित किया है।

यह सच है कि भरोसे की भाषा तभी बनती है जब वह सत्यनिष्ठ और आत्मीय हो। यदि वेद लोक में नहीं होता तो सब ओर अँधेरा ही होता। लोकजीवन में ही वेद का व्यवहारिक पक्ष स्थापित होता है। वैदिक और लौकिक के अभेद संबंध को शौनक के 'वृहद्देवता' और यास्क के 'निरुक्त' आदि ग्रंथों में देखा जा सकता है। शौनक कहते हैं कि वैदिक को लौकिक बना लेना चाहिए (2.101)। यास्क के अनुसार– 'अर्थवन्तः शब्दसामान्यात्' (नि. 1.5) अर्थात् वैदिक और लौकिक वाक्यों में शब्दों की समानता होने कारण वे मंत्र अर्थ युक्त होते हैं। वस्तुतः अर्थ शब्द पार्थिव का पर्याय है। शब्दों के अर्थ को लोकाश्रित माना गया है। व्याकरण का सिद्धांत हैं कि शब्दों के लिंग निर्णय के लिए नियम की आवश्यकता नहीं है, लिंग लोक व्यवहार से निर्णित होता है– लिंगमशिष्यम् लोकाश्रयत्वाल्लिंगस्य।

प्रश्न यह है कि वर्ग संघर्ष के लिए मार्क्सवादियों ने संस्कृत बनाम प्राकृत के जिस भाषायी विभेद को

MV_Jan_2017_Q7:Layout 1 12/14/2016 11:34 AM Page 39

हथियार बनाया, उसकी पृष्ठभूमि में अँग्रेज के आर्य बनाम अनार्य द्वन्द्व सिद्धांत विद्यमान है। तब उन्हें साम्राज्यवाद के विरोधी कैसे कहा जा सकता है?

भाषा भेद के कर्मठ कार्यकर्ता ग्रियर्सन ने प्राकृत और संस्कृत के बीच चीरा लगाते हुए लिखा है कि 'प्राकृत का अर्थ है- संस्कृत, सँवरी हुई, नकलीभाषा से भिन्न, सहज अकृत्रिम भाषा, प्राकृत की इस व्याख्या से यह परिणाम निकलता है कि वेद मंत्रों के संकलनकर्ता ब्राह्मणों ने इन मंत्रों में अपेक्षाकृत कृत्रिम संस्कृत भाषा सुरक्षित रखी है। वेद मंत्रों के समय की बोलचाल की भाषाएँ वास्तव में प्राकृत थी।' इस कथन को रामविलास शर्मा ने अपनी पुस्तक 'भाषा और समाज' में उद्धृत कर बताया है कि 'ग्रियर्सन ने वैदिक भाषा की कृत्रिमता सिद्ध करने के लिए कहीं उसका विश्लेषण नहीं किया। उसकी स्थापना का आधार प्राकृत-संस्कृत शब्दों का अस्तित्व और अर्थ भेद है। भले ही वैदिक काल में संस्कृत शब्द का चलन भाषा के संदर्भ में न रहा हो, ग्रियर्सन ने प्राकृत-संस्कृत का भेद उस समय के लिए भी सत्य माना है'(पृ. 191- 192)।

पाणिनीय शिक्षा यह बतलाती है कि प्राकृत और संस्कृत दोनों में आधार वर्णों की संख्याएँ समान हैं। इनकी कुल संख्याएँ तिरसठ या चौसठ होती हैं। संस्कृत के विद्वानों में भी प्राकृत और संस्कृत को लेकर एक मान्यता नहीं है, कुछ विद्वान संस्कृत को प्राकृत का ही संस्कारित रूप मानते हैं और कुछ संस्कृत को मूल पूर्ववर्ती भाषा मानते हैं तथा प्राकृत को परवर्ती अपभ्रंशित भाषा। लेकिन, वैदिक भाषा के स्वरूप में विरोधाभासी मान्यताओं का समाहार हो जाता है।

यहाँ हमें वैदिक भाषा से उदाहरण लेना चाहिए जिससे वेद और लोक का भाषिक संबंध ज्ञात हो सके। 'ऋग्वेद' का एक वाक्य है– 'क इमं इन्द्रं दशभिर्धेनुभिर्माम क्रीणाति' (4.24.10), इस वाक्य का सामान्य अर्थ है– दश गौओं से इंद्र को कौन खरीदेगा? 'क्री' धातु से बना क्रीणाति शब्द क्रीणीते भी होगा, यही शब्द लोक भाषाओं में 'कीन' कीनना बन गया है। कीनना और खरीदना एक ही शब्द के दो उच्चारणों के नमूने हैं। बिमल मित्र के सुप्रसिद्ध बांग्ला उपन्यास 'कौड़ी दीए कीनलाम' का हिंदी संस्करण है 'खरीदी कौड़ियों के मोल' आशय यह कि कौड़ी देकर कीना या खरीदा। कीन शब्द क्रीणीते शब्द से बना है,

MV_Jan_2017_Q7:Layout 1 12/14/2016 11:34 AM Page 40

वैदिक भाषा में संस्कृत और प्राकृत के बीच कोई भेदक रेखा नहीं खींची जा सकती, क्योंकि वह भाषा सृष्टि में सन्नद्ध है, छंदस् है, स्वर है, लय-ताल युक्त संगीत है, यह संसृति सरिता की लहरों के संग-संग बहती है और प्रत्यक्ष प्रकरण बन जाती है-- सं सं स्रवन्ति सिन्धवः। वैदिक भाषा में रश्मि है, दिव है, दृश्य है, दिक् है, दृग और दृङ जैसे प्रकाश तरंगों के साथ थिरकनेवाले शब्द और ध्वनियाँ है। वैदिक ऋचाओं के शब्दों के वर्ण अपने ध्वनि और रश्मि दोनों पक्षों से गतिमान होते हैं, इनमें ज्योति के भीतर बजनेवाले रश्मि-कणों की ध्वनियाँ भी सुनी जा सकती हैं, ज्योति-क्रीड़ा देखी जा सकती है, इसमें श्रव्य और दृश्य के रेखाकार निहित हैं, इन्हें संख्या में गिना जा सकता है।

इसमें ण का न बन गया है और अन्य वर्णों का लोप हो गया है, लेकिन, खरीद शब्द में क का ख हो गया, आधे र का पूरा र, र के साथ ईकार के आने से री, त का द और ण का लोप हो गया। इससे खरीद और कीन दोनों शब्दों का वैदिक शब्द से संबंध स्पष्ट होता है। वर्णों और शब्दों में होनेवाले रूपांतरण का सर्वसमावेशी आधार अक्षर है। यह भाषा की अद्वैत भूमि है, इसमें सर्व की भाषा का एकात्म तत्त्व है जहाँ सब में सभी हैं।

वैदिक भाषा में संस्कृत और प्राकृत के बीच कोई भेदक रेखा नहीं खींची जा सकती, क्योंकि वह भाषा सृष्टि में सन्नद्ध है, छंदस् है, स्वर है, लय-ताल युक्त संगीत है, यह संसृति सरिता की लहरों के संग-संग

बहती है और प्रत्यक्ष प्रकरण बन जाती है– सं सं स्रवन्ति सिन्धवः। वैदिक भाषा में रश्मि है, दिव है, दृश्य है, दिक् है, दृग और दृङ जैसे प्रकाश तरंगों के साथ थिरकने वाले शब्द और ध्वनियाँ है। वैदिक ऋचाओं के शब्दों के वर्ण अपने ध्वनि और रश्मि दोनों पक्षों से गतिमान होते हैं, इनमें ज्योति के भीतर बजनेवाले रश्मि-कणों की ध्वनियाँ भी सुनी जा सकती हैं, ज्योति-क्रीड़ा देखी जा सकती है, इसमें श्रव्य और दृश्य के रेखाकार निहित हैं, इन्हें संख्या में गिना जा सकता है।

वैदिक भाषा को सृष्टि के समानांतर या सृष्टि में समाहित माना जाता है। 'शतपथ ब्राह्मण' के अनुसार वेद त्रयी की भाषा सर्वभूतात्मक है, उसमें सारे अस्तित्व समाहित हैं- त्रय्यां वाव विद्यायां सर्वाणि भूतानि.. (10. 4. 2. 22), सूर्य ही वागग्नि का स्रोत है, त्रयी विद्या सूर्य में तपती है, सूर्य ही बुनियाद है– तस्यैषा प्रतिष्ठा (10.4.2.28)। इस कथन का अभिप्राय यह है कि भाषा की त्रिधा संरचना– तीन काल, तीन लिंग, तीन वचन इत्यादि त्रयी विद्या से प्रसूत हुई है और यह त्रयी

MV_Jan_2017_Q7:Layout 1 12/14/2016 11:34 AM Page 41

वेद के दिक्कालिक स्वरूप को नहीं जानने के कारण ही उसकी भाषा को संस्कृत और प्राकृत के दो धड़े बनाए गए, इनके बीच दीवार खड़ी की जाने लगी, यह नहीं देखा गया कि कैसे निरंतर इनमें परस्पर रूपांतरण होता रहा है। इन्हीं तथ्यों के आधार पर भारतीय भाषाएँ परस्पर पूरक बन हजारों से अनेक छटाओं में प्रवाहमान रहीं। अँग्रेज ने भाषा सर्वेक्षण द्वारा भाषा की भारतीय अवधारणा तोड़कर उन्हें विभेदों में प्रस्तुत किया और समाज-मानस को खंडित करने का यत्न किया।

है सूर्य की अग्नि का त्रिकात्मक स्फोट। त्रयी की प्राण-ध्वनि सभी जीवों की वाणी बन गई है। इसलिए प्राणिमात्र में व्याप्त वेद त्रयी की भाषा को प्राकृत और संस्कृत में विभेदित करना अँग्रेजपोषित ग्रियर्सन की भारी धृष्टता है।

वाक्य पद में, पद वर्ण में और वर्ण भी नाद-बिंदु में लय होते हैं, ऋचाएँ सामगान बन जाती हैं। सामगान में पद और अर्थ की प्रधानता नहीं होती, सार्थक और निरर्थक पदों का भेद नहीं होता, बस ऋचाओं में निहित अक्षर की प्रधानता होती है। अक्षरतंत्र का कथन है- अनृगाद्यक्षरम्, अर्थात सामगान में प्रयुक्त सार्थक और निरर्थक सभी पद अक्षर हैं। अक्षर ही शाश्वत आधार है, अक्षर से ही पद सृजित होते हैं और वही पद विषय की सापेक्षता से कहीं सार्थक तो कहीं निरर्थक बन जाते हैं। अक्षर की स्थापना के कारण ही 'सब में सभी है' की धारणा बनी सर्व सर्वात्मकम् (पातञ्जलि योगसूत्र)। भाषाओं में या शब्दों में ही नहीं, वर्णों में भी अक्षर ही सर्वत्र एकात्म भाव से स्थित है। पतंजलि कहते हैं– जात्यानुच्छेदेन सर्व सर्वात्कम्-एकात्मता तब प्रकट होती है जब वर्णों की निजी पहचान अक्षर में विलीन हो जाती है, इस सूत्र के अनुसार जबतक 'क' वर्ण की निजी सत्ता स्थिर है, तभी तक 'क' है, अन्यथा 'क' का रूपांतरण ख, ग, घ, ल इत्यादि किसी वर्ण में संभव है, उच्चारण भेद से वह कोई दूसरा वर्ण बन सकता है।

वेद के दिक्कालिक स्वरूप को नहीं जानने के कारण ही उसकी भाषा को संस्कृत और प्राकृत के दो धड़े बनाए गए, इनके बीच दीवार खड़ी की जाने लगी, यह नहीं देखा गया कि कैसे निरंतर इनमें परस्पर रूपांतरण होता रहा है। इन्हीं तथ्यों के आधार पर भारतीय भाषाएँ परस्पर पूरक बन अनेक छटाओं में प्रवाहमान रहीं। अँग्रेज ने भाषा सर्वेक्षण द्वारा भाषा की भारतीय अवधारणा तोड़कर उन्हें विभेदों में प्रस्तुत किया और समाज-मानस को खंडित करने का यत्न किया।

लेखक राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्, नई दिल्ली में प्राध्यापक हैं

MV_Jan_2017_Q7:Layout 1 12/14/2016 11:34 AM Page 42

प्राचीन काल से ही हमारे ऋषियों एवं मुनियों ने धरती पर जीवन को आनंद और उल्लास में परिणत करने की अनेक विद्याओं का वैज्ञानिक शोध किया था, जिसमें पर्यावरण को संतुलित बनाए रखने के लिए प्रत्येक क्षेत्र में उचित और अनुचित कार्यों का विवरण है। भारत का कोई भी पर्व, महोत्सव या व्रत ऐसा नहीं है जिसका कोई वैज्ञानिक आधार न हो। सभी पर्व एवं महोत्सवों की स्थापना भारत के प्राकृतिक, भौगोलिक प्रभाव तथा सूक्ष्म महत्त्व को ध्यान में रख कर ऋषियों के द्वारा की गई थी।

MV_Jan_2017_Q7:Layout 1 12/14/2016 11:34 AM Page 43

ओमप्रकाश दुबे

भारतीय सनातन संस्कृति में पर्यावरण दर्शन

प्रायः लोग सोचते हैं कि पर्यावरण शब्द अंग्रेजी के 'इनवायरमेंट' के अर्थ में प्रयुक्त नवनिर्मित शब्द है। ऐसी निराधार सोच का कारण सम्यक् अध्ययन की कमी है। चेतन जगत् के चारों ओर का आवरण जिसमें वह जीवन की समस्त अनुक्रियाओं को संपन्न करता है, प्रकृति की वह व्यवस्था पर्यावरण है अर्थात् धरती का चतुर्दिक आवरण। सामान्यतः वायु, जल, जीव-जंतु, पेड़-पौधे, ध्वनि, तापक्रम, नमी, सजीव एवं निर्जीव सभी पर्यावरण के अभिन्न अंग हैं। सच यह है कि पर्यावरण शब्द का प्रयोग भारतीय संस्कृति में अति प्राचीन है। भविष्योत्तर पुराण प्रति सर्ग 7.15 में पर्यावरण शब्द का प्रयोग है–

नारदस्तु जगमासु पर्यावरणं विवर्धसु।
गायन हरिकथा दिव्या तन्त्री च वादयन मुदा।।

प्राचीन काल से ही हमारे ऋषियों एवं मुनियों ने धरती पर जीवन को आनंद और उल्लास में परिणत करने की अनेक विद्याओं का वैज्ञानिक शोध किया था, जिसमें पर्यावरण को संतुलित बनाए रखने के लिए प्रत्येक क्षेत्र में उचित और अनुचित कार्यों का विवरण है।

भारत का कोई भी पर्व, महोत्सव या व्रत ऐसा नहीं है जिसका कोई वैज्ञानिक आधार न हो। सभी पर्व एवं महोत्सवों की स्थापना भारत के प्राकृतिक, भौगोलिक प्रभाव तथा सूक्ष्म महत्त्व को ध्यान में रख कर ऋषियों के द्वारा की गई थी।

आधुनिक वैज्ञानिकों ने पर्यावरण को चार घटकों में विभाजित किया है– प्रथम-थलमंडल, द्वितीय-जलमंडल, तृतीय-वायुमंडल और चतुर्थ-जीव-मंडल। पर्यावरणघटकों की अवधारणा 'अथर्ववेद' के पृथ्वीसूक्त के तीसरे मंत्र में वर्णित है–

MV_Jan_2017_Q7:Layout 1 12/14/2016 11:34 AM Page 44

यस्यां समुद्र उत सिन्धुरापो
यस्यामन्नं कृष्टयः संभूवु।
यस्यामिदं जिन्वति प्राणदेजत्
सा नो भूमिः पूर्वपेये दधातु।।

अथर्व. 12.1.3

अर्थात् जिस पृथ्वी के अंक में उदधि लहराता है, सरिताएँ कलगान करती हैं, कृषि द्वारा अन्न उत्पन्न होता है, जिस पर जड़-जंगम सजता-सँवरता है, प्राणी जगत् तृप्त होकर चलता-फिरता है। इस पावन पृथ्वी पर हम नित्य मधुर पेय रस का पान करें। मंत्र का प्रथम पद जल मंडल, द्वितीय थल मंडल, तृतीय वायुमंडल और चतुर्थ जीव मंडल पर स्पष्टतः प्रकाश डाल रहा है।

थल मंडल

पृथ्वी वनस्पतियों की पोषक तथा थलीय जंतु जगत की आवास स्थली है। पर्यावरण के इस घटक की आधुनिक औद्योगिकीकरण के कारण वीभत्स स्थिति हो चुकी है। जहाँ औद्योगिकीकरण के फलस्वरूप चतुर्दिक अपशिष्ट पदार्थों की परत जमी हुई है, वहीं पर रसायनों के प्रचुर प्रयोग ने भूमि को बंजर बना देने की स्थिति पैदा कर दी है। जनसंख्या वृद्धि, वनोच्छेदन, मशीनीकरण तथा अनियोजित नगरीकरण संपूर्ण थल मंडल को विकृत करता जा रहा है। इस संदर्भ में 'अथर्ववेद' के पृथ्वी सूक्त के 35वें मंत्र का कथन है–

यत् ते भूमि विखनामि, क्षिप्रं तदपि रोहतु।
मा ते मर्म विमृग्वरी मा ते हृदयमर्पिपम्।।

अथर्व. 12.1.35

अर्थात् हे माँ! कंद, मूल, औषधि, मणिरत्नों आदि का खनन हमने मूढ़तावश किया। वह पुनः शीघ्र उगकर हमारे पर्यावरण को पुनः समृद्ध बनाने तथा माँ मुझे ऐसी शक्ति प्रदान कर जिससे मैं तेरे मर्म पर पुनः आघात न

करूँ और तेरा हृदय व्यथित न करूँ। वैदिक ऋषि की थल मंडल के प्रति ये पश्चाताप भरी वाणी हमें सचेत कर रही है कि हम पृथ्वी का शोषण नहीं, केवल दोहन करें। इसलिए अथर्ववेद में कहा गया है–

माता भूमिः पुत्रो अहं पृथिव्याः।

अथर्व. 12.1.12

यजुर्वेद का कथन है –

पृथिवि मातर्मा मा हिसीर्मो अहं त्वाम्।।

यजु. 10.23

और

पृथिवि मा हिसी।

अतः सभी कृषि वैज्ञानिकों, पर्यावरणविदों तथा जनसाधारण का पुनीत कर्तव्य है कि पृथ्वी को पोषक तत्त्व विहीन बनने से रोकें।

जल मंडल

पर्यावरण का वह भाग जिसमें जल उपस्थित रहता

MV_Jan_2017_Q7:Layout 1 12/14/2016 11:34 AM Page 45

है, उसे जल मंडल या हाइड्रोस्फियर कहते हैं। जल मंडल के दो रूप हैं– लवणीय एवं अलवणीय। लवणीय जलमंडल के अंतर्गत समुद्रीय जल तथा अलवणीय जल मंडल के अंतर्गत सरिता, सरोवर तथा भूगर्भ जल आता है। समुद्रीय लवणीय जल वर्षा हेतु तथा उसमें बसे जलचर-जीव पारिस्थिति तंत्र के लिए अत्यंत आवश्यक है। इसी कारण 'ऋग्वेद' में 'समुद्रज्येष्ठाः सलिलस्य' कहा गया है। जो जलचक्र आज पश्चिमी वैज्ञानिक पेनमेन के नाम पर है, वस्तुतः वह वैदिक ऋषि वशिष्ठ के नाम पर होना चाहिए, जिन्होंने सर्वप्रथम जलचक्र का वर्णन किया है–

समुद्रज्येष्ठाः सलिलस्य
मध्यात्पुनाना यन्त्यनिविशमानाः।
इंद्रो या वज्री वृषभो रराद ता
आपो देवीरिह मामवन्तु।।

ऋग्वेद 7.49.1

अर्थात् समुद्र जिसमें प्रशत्यतर है, ऐसे विश्व के

जो जल अंतरिक्ष में उत्पन्न होते हैं और जो जल नदी आदि के रूप में बहते हैं, जो जल नहर, कुँए आदि रूप में खोदने से उत्पन्न होते हैं, जो समुद्र में जाकर मिल जाने वाले हैं और जो दीप्तिमान एवं पवित्र करने वाले हैं, वे दिव्य गुण से संपन्न जल इस लोक में मेरी रक्षा करें या मुझ को प्राप्त होवें।

पवित्र एवं सदा संवाहक जल, अंतरिक्ष के मध्य में से गमन करते हैं। वज्र के धारक और कामनाओं के वर्षक इंद्र इन जलों को तोड़कर पृथ्वी पर प्रवाहित कर रहे हैं। ये दिव्य गुण से सम्पन्न जल इस लोक में मेरी रक्षा करें या मुझे प्राप्त होवें। यह जलचक्र का प्रथम भाग है। द्वितीय भाग में सरिता, सरोवर एवं कूप के अलवणीय जल के रूप का वर्णन है–

या आपो दिव्या उत वा स्रवन्ति,
खनित्रिमा उत वा याः स्वयञ्जाः।
समुद्रार्था याः शुचयः पावकास्ता,
आपो देवीरिह मामवन्तु।।

ऋ. 7.49.2

अर्थात् जो जल अंतरिक्ष में उत्पन्न होते हैं और जो जल नदी आदि के रूप में बहते हैं, जो जल नहर, कुँए आदि रूप में खोदने से उत्पन्न होते हैं, जो समुद्र में जाकर मिल जाने वाले हैं और जो दीप्तिमान एवं पवित्र करने वाले हैं, वे दिव्य गुण से संपन्न जल इस लोक में मेरी रक्षा करें या मुझ को प्राप्त होवें। इस प्रकार इन मंत्रों में जलचक्र 'समुद्रज्येष्ठाः सलिलस्य से आरंभ हो, पुनः समुद्रार्था' में समाप्त है।

दिव्यगुणों से युक्त अलवणीय जल ही पेय और

MV_Jan_2017_Q7:Layout 1 12/14/2016 11:34 AM Page 46

सिंच्य जल कहा जाता है, जिसकी हमारे ऋषियों ने हृदय से प्रार्थना की है। 'यजुर्वेद' में जल के उचित भोग-क्षमता की प्रार्थना की गई है–

ॐ आपो हि ष्ठा मयोभुव।
ॐ ता न ऊर्जे दधातन।
ॐ महे रणाय चक्षसे।
ॐ यो वः शिवतमो रसः।
ॐ तस्य भाजयतेह नः।
ॐ उशतीरिव मातरः।
ॐ तस्मा अरं गमाय वो।
ॐ यस्य क्षयाय जिन्वथ।
ॐ आपो जनयथा च नः।

यजु. 11. 50-52.; 36.14-16

अर्थात् हे जल! तुम निश्चय ही कल्याणकारी हो, अतः अन्नादि रसों द्वारा बलवर्धन कर हमें परमात्मा दर्शन हेतु योग्य बनाओ। पुत्र हितैषिणी माँ के दूध पान की भाँति हमें अपने परम कल्याणमय पय रस का भागी बनाओ तथा जिस रस में समस्त विश्व को तृप्ति प्राप्त होती है, उसका हमें उचित भोक्ता बनाओ।

वायुमंडल

पर्यावरण का तृतीय घटक वायुमंडल है। थल एवं जलमंडल के ऊपर लगभग 200 किमी. फैले गैसीय आवरण को वायुमंडल या एटमोस्फीयर कहते हैं। यह संपूर्ण पर्यावरण का अभिन्न अंग है। इसकी प्रतिरोधात्मक शक्ति के कारण ही अंतरिक्ष से पृथ्वी की ओर आने वाले उल्का आदि आकाशीय पिंड पृथ्वी पर पहुँचने से पूर्व ही नष्ट हो जाते हैं। वायुमंडल धरातल का तापमान भी नियंत्रण करता है। वैज्ञानिकों के अनुसार यदि यह वायुमंडल न हो तो पृथ्वी पर दिन का तापमान 100 डि. से. हो जाए। ऐसी स्थिति में अन्य ग्रहों की भाँति पृथ्वी पर भी जीवों का निवास असंभव हो जाएगा। यह वायुमंडल आवरण ही पृथ्वी को जीवों के रहने के उपयुक्त बनता है।

प्राणी चाहे थलचर हो या नभचर या जलचर हों, सभी अपनी श्वसन क्रिया से वायुमंडल से आक्सीजन लेकर कार्बन डाईऑक्साइड छोड़ते हैं। वृक्षों के रूप में प्रकृति का एक रासायनिक कारखाना इस कार्बन डाईऑक्साइड को ग्रहण करता है। वृक्ष कार्बन डाईऑक्साइड लेकर बदले में प्राणी जगत् को प्रकाश-संश्लेषित- जीव-रासायनिक-आक्सीजन क्रिया से निसृत कर पर्यावरण को शुद्ध बनाते हैं। इस प्रकार पारिस्थिति-तंत्र की दृष्टि से वनस्पति पर जीवों का तथा जीवों पर वनस्पति का परस्पर विशेष प्रभाव पड़ता है।

प्राकृतिक रूप से वायुमंडल के संगठन में आक्सीजन सहित अनेक सक्रिय और अक्रिय गैसें, जलवाष्प एवं धूलकण पर्याप्त मात्रा में रहते हैं, जिनका मौसम और जलवायु की दृष्टि से बहुत महत्त्व होता है। किंतु दुर्भाग्य से इस प्राकृतिक संगठन को आधुनिक औद्योगिक एवं वैज्ञानिक क्रांति ने अत्यंत प्रदूषित बना दिया है। पृथ्वी की सुरक्षा कवच ओजोन परत जो कि वायुमंडल के ऊपरी भाग में 30 से 60 किमी. विस्तृत है, सूर्य की पैराबैंगनी किरणों के तीव्र ताप को बाधित कर अत्यावश्यक आंशिक भाग छनित कर पृथ्वी पर भेजती है, उस महत्त्वपूर्ण ओजोन परत में भी औद्योगिक प्रतिष्ठानों से निकली हुई गैसें जैसे क्लोरोफ्लोरो कार्बन, मीथेन, कार्बन डाईऑक्साइड, कार्बन मोनो ऑक्साइड के कारण छेद हो गया है। वायुमंडल के संरक्षण हेतु थल

MV_Jan_2017_Q7:Layout 1 12/14/2016 11:34 AM Page 47

मंडलीय वानिकी के विस्तार की वैदिक ऋषियों ने चर्चा की है। 'ऋग्वेद' के अनुसार जल में उगने वाले पौधे, आकाश, वन तथा वृक्षों से आच्छादित पर्वत प्रदूषण को कम करते हैं–

आपः औषधीस्त् नोऽवन्तु, द्यौर्वना गिरयो वृक्ष केशा।

'यजुर्वेद' में वृक्षों को दुष्प्रभावों का शमन करने वाला बताया है–

वनस्पति शमीतारम्।

यजु.28.10

वनस्पतिः शमिता।

यजु. 29.35

यजुर्वेद की रुद्राष्टाध्यायी में वृक्षों, औषधियों तथा वनों को रुद्र कहा गया है--

वनानां पतये नमः। वृक्षाणां पतये मः।
औषधीना पतये नमः।

अतः वृक्ष रुद्र भी हैं, जो वायुमंडलीय विष यानी कार्बन डाईऑक्साइड का पान करते हैं। अतः वृक्षारोपण को शिव-सेवा कहा जाता है। 'मत्स्य पुराण' ने तो लोक कल्याण की दृष्टि से दशकूपों के तुल्य एक वापी, दस वापियों के तुल्य एक जलाशय, दस जलाशयों के तुल्य एक पुत्र और दस पुत्रों के तुल्य एक वृक्ष का महत्त्व प्रतिपादित किया है–

दशकूप समावापी, दशवापी समो ह्रदः।
दश ह्रद समो पुत्रः, दश पुत्र समो द्रुमैः।।

जीवन मंडल

जीवमंडल पृथ्वी का वह भाग है, जिसमें प्राणी जगत् निवास करता है। इसे अंग्रेजी में बायोस्फियर कहते हैं। धरातल से लगभग 7 किमी. ऊपर और 7 किमी. नीचे का भाग प्राणिमंडल बनाता है। एक आंकड़े के अनुसार लगभग 90 प्रतिशत प्राणी 1 किमी. ऊपर और 1 किमी. नीचे रहते हैं। प्राणी चाहे थलचर हो या नभचर

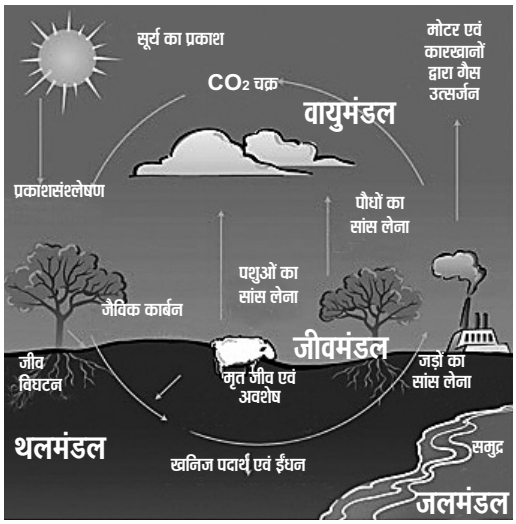

या जलचर हों, सभी अपनी श्वसन क्रिया से वायुमंडल से आक्सीजन लेकर कार्बन डाईऑक्साइड छोड़ते हैं। वृक्षों के रूप में प्रकृति का एक रासायनिक कारखाना इस कार्बन डाईऑक्साइड को ग्रहण करता है। वृक्ष कार्बन डाईऑक्साइड लेकर बदले में प्राणी जगत् को प्रकाश-संश्लेषित- जीव-रासायनिक-आक्सीजन क्रिया से निसृत कर पर्यावरण को शुद्ध बनाते हैं। इस प्रकार पारिस्थिति-तंत्र की दृष्टि से वनस्पति पर जीवों का तथा जीवों पर वनस्पति का परस्पर विशेष प्रभाव पड़ता है। पारिस्थितिकी-तंत्र में विविध जीवों की बहुआयामी उपादेयता के कारण 'यजुर्वेद' ने निर्देश दिया है–

मित्रास्याहं चक्षुणा सर्वाणि भूतानि समीप्से।

और

ईशावाश्यमिदं सर्वं यत्किंञ्च जगत्यां जगत्।

यजुर्वेद-40.1

अर्थात् हम सभी प्राणियों को मित्रवत समझें, सभी में परमात्मा का वास है।

लेखक पर्यावरणविद् और जनशक्ति विकास एवं प्रबंधन सलाहकार हैं।

MV_Jan_2017_Q7:Layout 1 12/14/2016 11:34 AM Page 48

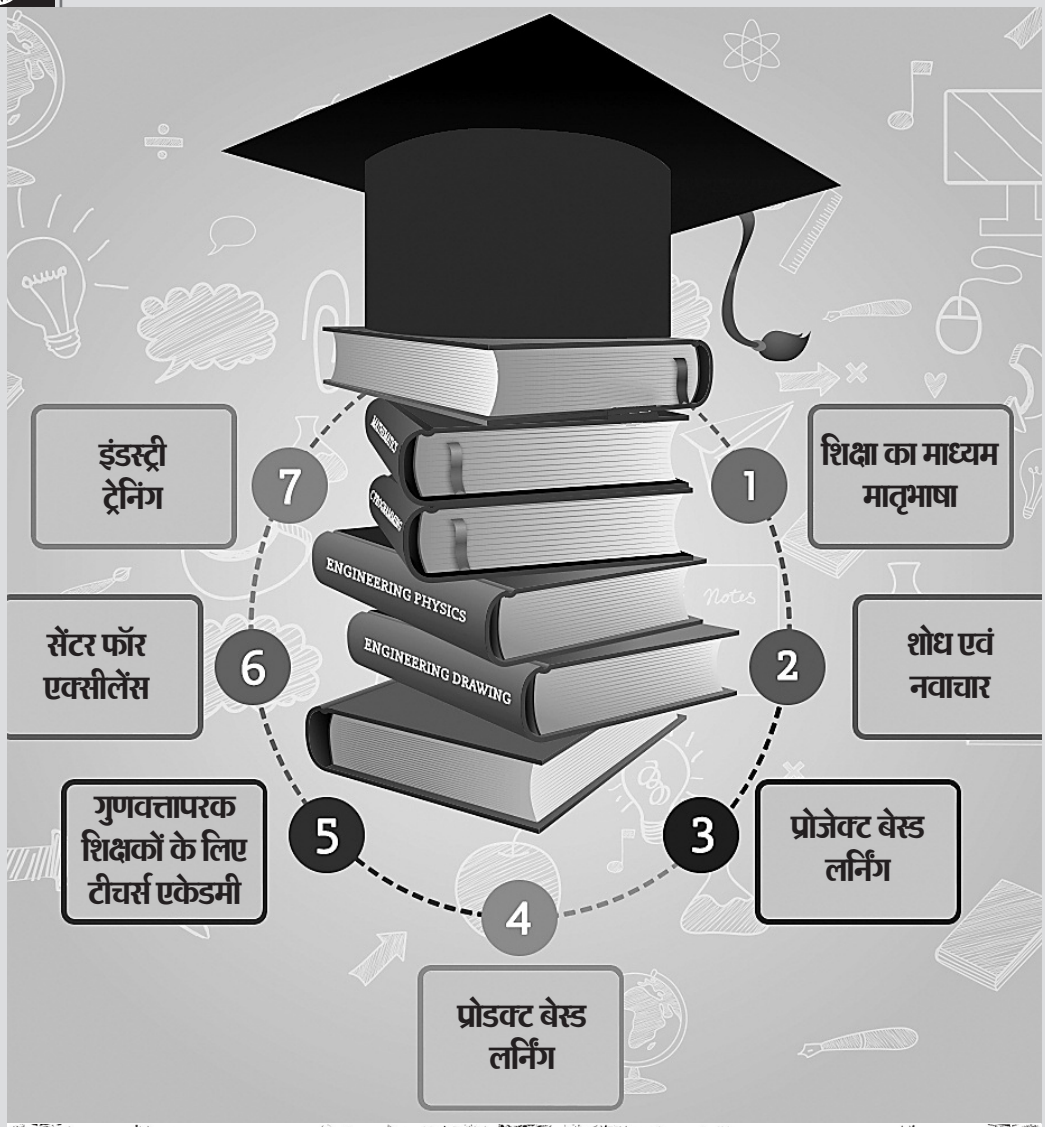

आज कोई भी समाज, देश या राज्य तभी समृद्ध माना जाता है जब वह तकनीकी रूप से समृद्ध हो। किसी भी समाज, देश या राज्य को तकनीकी रूप से सक्षम और समृद्ध बनाने के लिए वहाँ की तकनीकी शिक्षा प्रणाली पर बड़ा दारोमदार होता है। अधिकतर कंपनियों में कार्य कर रहे वरिष्ठ अधिकारियों का यह मनाना है कि वर्तमान तकनीकी शिक्षा उन्हें इंडस्ट्री की माँग के अनुरूप मानव संसाधन उपलब्ध नहीं करा पा रही है और उन्हें चयनित अभियंताओं को प्रोफेशनल्स बनाने के लिए अलग से ट्रेनिंग देनी पड़ रही है। ऐसे में 6 माह की इंडस्ट्री ट्रेनिंग को पाठ्यक्रम में शामिल किया जाना चाहिए।

MV_Jan_2017_Q7:Layout 1 12/14/2016 11:34 AM Page 49

डॉ. विनय कुमार पाठक

तकनीकी शिक्षा की चुनौतियाँ और संभावनाएँ

आवश्यकता आविष्कार की जननी है और परिवर्तन प्रकृति का नियम, तकनीक जीवन को असान बनाने की आवश्यकता है और आवश्यकताओं में परिवर्तन तकनीकी शिक्षा में उन्नयन की माँग करता है। आज कोई भी समाज, देश या राज्य तभी समृद्ध माना जाता है जब वह तकनीकी रूप से समृद्ध हो। किसी भी समाज, देश या राज्य को तकनीकी रूप से सक्षम और समृद्ध बनाने के लिए वहाँ की तकनीकी शिक्षा प्रणाली पर एक बड़ा दारोमदार होता है। वर्तमान में भारत में तकनीकी शिक्षा की बात करें तो हर वर्ष लगभग 30 लाख छात्र तकनीकी शिक्षा के क्षेत्र में प्रवेश लेते हैं। यदि हम अपनी युवा पीढ़ी को इंजीनियरिंग में दक्ष बनाना चाहते हैं, ताकि भारत को तकनीकी रूप से ताकतवर बनाने में वह अपनी प्रत्यक्ष भूमिका का निर्वहन कर सके, तो हमें तकनीकी शिक्षा के पाठ्यक्रमों में समय की माँग के अनुरूप परिवर्तन करने होंगे।

इंडस्ट्रियल ट्रेनिंग

किसी भी शिक्षा व्यवस्था में परिवर्तन के लिए सबसे पहले शिक्षा व्यवस्था की मूल्याँकन प्रणाली में परिवर्तन की आवश्यकता होती है। स्किल बेस्ड लर्निंग के जमाने में ज्ञानात्मक कौशल के साथ ही साथ क्रियात्मक एवं भावात्मक कौशल का भी मूल्याँकन किया जाना चाहिए। अधिकतर कंपनियों में कार्य कर रहे वरिष्ठ अधिकारियों का यह मनाना है कि वर्तमान तकनीकी शिक्षा उन्हें इंडस्ट्री की माँग के अनुरूप मानव संसाधन उपलब्ध नहीं करा पा रही है, उन्हें चयनित अभियंताओं को प्रोफेशनल्स बनाने के लिए अलग से ट्रेनिंग देनी पड़ रही है। ऐसे में छह माह की इंडस्ट्री ट्रेनिंग को पाठ्यक्रम में शामिल किया जाना

MV_Jan_2017_Q7:Layout 1 12/14/2016 11:34 AM Page 50

चाहिए। साथ ही यह ट्रेनिंग खानापूर्ति तक सीमित न रह जाए, इसके लिए इस ट्रेनिंग को पाठ्यक्रम की मूल्याँकन प्रणाली में शामिल किया जाना चाहिए। साथ ही तकनीकी शिक्षा के स्नातक एवं परास्नातक स्तर के पाठ्यक्रमों में 'च्वाइस बेस क्रेडिट' सिस्टम लागू किया जाना चाहिए। यह एक ऐसी प्रणाली है जिसके अंतर्गत सभी पाठ्यक्रमों के प्रत्येक वर्ष के क्रेडिट (श्रेयांक) निर्धारित कर दिए जाते हैं, जिसको पूरा करने के लिए न्यूनतम एवं अधिकतम समय निर्धारित किया जाता है। साथ ही साथ ओपन एलेक्टिव विषय भी पाठ्यक्रम में शामिल किए जाने चाहिएँ, जिससे छात्र अपनी रुचि के अनुरूप विषय चुन सकें।

शिक्षा का माध्यम हो मातृ भाषा

भारतीय परिदृश्य में इंजीनियरिंग के पाठ्यक्रमों की एक बड़ी चुनौती भाषा को लेकर रही है। इंजीनियरिंग पाठ्यक्रमों को क्षेत्रीय भाषा में छात्रों को मुहैया कराने की ओर हमें अग्रसर होना चाहिए, क्योंकि अपनी भाषा में किसी भी पाठ्यक्रम को पढ़ना और समझना ज्यादा आसान है। जब छात्र पाठ्यक्रम को अपनी भाषा में पढ़ेगा तो उसमें विषय के प्रति रुचि बढ़ेगी। इसके लिए वर्तमान में एक आसान व्यवस्था 'स्वयं' के मैसिव ऑनलाइन ओपन लर्निंग कोर्सेस हो सकते हैं। स्वयं के इस प्लेटफॉर्म पर विभिन्न क्षेत्रों में निवास करने वाले विषय विशेषज्ञ क्षेत्रीय भाषा में अपने विषय से संबंधित ऑडियो-विजुअल व्याख्यान तैयार कर अपलोड कर सकते हैं, जिससे छात्र आसानी से अपनी भाषा में संबंधित विषय की जानकारी प्राप्त कर सकता है। अक्सर इस बात की वकालत केंद्रीय मानव संसाधन एवं विकास मंत्री प्रकाश जावड़ेकर करते रहते हैं।

इंजीनियरिंग पाठ्यक्रमों को क्षेत्रीय भाषा में छात्रों को मुहैया कराने की ओर हमें अग्रसर होना चाहिए। क्योंकि अपनी भाषा में किसी भी पाठ्यक्रम को पढ़ना और समझना ज्यादा आसान है। जब छात्र पाठ्यक्रम को अपनी भाषा में पढ़ेगा तो उसमें विषय के प्रति रुचि बढ़ेगी।

शोध एवं नवाचार

इंजीनियरिंग के क्षेत्र में स्नातक स्तर पर ही शोध एवं नवाचार एक आवश्यक कड़ी है। छात्रों की शोध रुचि एवं अभिरुचि को बढ़ावा देने के लिए तकनीकी संस्थानों में इनोवेशन एवं इन्क्यूबेशन सेंटर्स स्थापित करने की व्यवस्था की जानी चाहिए। इनोवेशन एवं इन्क्यूबेशन सेंटर्स एक ऐसा स्थान है जहाँ छात्र अपने विचार को सृजनात्मक तरीके से प्रोडक्ट में तब्दील कर सकते हैं। ये एक कारगर तरीका हो सकता है अटल इनोवेशन मिशन जैसी योजनाओं के लिए पौध तैयार करने का। तकनीकी शिक्षा से जुड़े छात्रों को छोटे-छोटे प्रोजेक्ट्स के माध्यम से जोड़ा जा सकता है। इसके जरिये उनके व्यावसायिक कौशल को भी निखारा जा सकता है। प्रोजेक्ट बेस्ड लर्निंग के साथ एक नया तरीका प्रोडक्ट बेस्ड लर्निंग का भी हो सकता है। एशिया में जापान एवं चीन की बात करें तो उनकी तेजी से बढ़ती अर्थव्यवस्था की मुख्य कड़ी प्रोडक्ट बेस्ड लर्निंग है। जापान एवं चीन में लोग प्रोडक्ट बेस्ड लर्निंग के माध्यम से रोजगार प्राप्त कर रहे हैं, इलेक्ट्रॉनिक उपकरणों की

MV_Jan_2017_Q7:Layout 1 12/14/2016 11:34 AM Page 51

एसेंबलिंग सीखकर छोटे इलेक्ट्रॉनिक उपकरणों का उत्पादन कर लोग आजीविका अर्जित कर रहे हैं और अर्थव्यवस्था के सुदृढ़ीकरण में अपनी भूमिका निभा रहे हैं। यह वह तरीका हो जो छात्र के व्यावसायिक कौशल को निखारने के साथ ही साथ रोजगार भी मुहैया करवाता है और इंटरप्रेनुअरशिप भी विकसित कर सकता है। जो कि 'स्टार्टअप-इंडिया' जैसी योजनाओं के लिए मानवसंसाधन जुटाने की एक कारगर कड़ी साबित हो सकता है।

गुणवत्तापरक शिक्षक

शिक्षा प्रणाली की सबसे अहम डोर शिक्षक हैं। वर्तमान में पूरा देश और खास कर तकनीकी शिक्षा गुणवत्तापरक शिक्षकों की कमी से जूझ रही है। तकनीकी शिक्षा के क्षेत्र में गुणवत्तापरक शिक्षकों की कमी को पूरा करने के लिए 'नेशनल डिफेंस एकेडमी' एवं 'कंबाइंड डिफेंस एकेडमी' की तर्ज पर 'टीचर्स एकेडमी' की स्थापना की जानी चाहिए, जिससे जिसको भी शिक्षक बनना है वो शुरुआत से ही इन अकादमियों में ट्रेनिंग लें। साथ ही जो अध्यापक हमारे संस्थानों में अध्यापन का कार्य कर रहे हैं उनको अपडेट करने के लिए छोटे-छोटे समयांतराल पर फैकल्टी डेवलपमेंट प्रोग्राम चलाए जाने चाहिएँ। किसी संस्थान में किस समयांतराल में किस क्षेत्र में फैकल्टी डेवलपमेंट प्रोग्राम को चलाए जाने की आवश्यकता है। इस कार्य को मूर्त रूप देने के लिए नीड बेस्ड एनालिसिस की आवश्यकता होती है। इस नीड बेस्ड एनालिसिस के लिए संस्थानों के परिसर में सेंटर फॉर एक्सीलेंस की स्थापना की जानी चाहिए।

इंजीनियरिंग के छात्रों में छोटे-छोटे प्रोजेक्ट्स के माध्यम से व्यावसायिक कौशल को भी निखारा जा सकता है। एशिया में जापान एवं चीन की बात करें तो उनकी तेजी से बढ़ती अर्थव्यवस्था की मुख्य कड़ी 'प्रोडक्ट बेस्ड लर्निंग' है। वहाँ लोग इसके माध्यम से रोजगार प्राप्त कर रहे हैं, इलेक्ट्रॉनिक उपकरणों की एसेम्बलिंग सीखकर छोटे उपकरणों का उत्पादन कर आजीविका अर्जित कर रहे हैं।

सूचना संचार क्रांति

भारत में सूचना संचार तकनीक ने संचार के क्षेत्र में क्रांति ला दी है। वर्तमान में लगभग एक अरब मोबाइल फोन यूजर एवं लगभग 45 करोड़ इंटरनेट यूजर्स हैं, ऐसे में नेताओं-अभिनेताओं का मैसेंजर्स के जरिये विभिन्न अवसरों पर बधाई संदेश आना आम-सा होता जा रहा है। इसी कड़ी में शिक्षा के क्षेत्र में सरकार द्वारा प्रदान की जा रही स्कॉलरशिप, इनोवेशन प्रमोशन स्कीम और स्टार्टअप जैसे फंडों के विषय में मोबाइल संदेश, व्हाट्सएप, फेसबुक और यू-ट्यूब जैसे प्लेटफार्मों के जरिये व्यापक प्रचार किए जाने पर जोर दिया जाना चाहिए। इस तरह की मुहिम से छात्रों को इन योजनाओं से जोड़ने का कार्य असान हो सकता है। भारत निर्माण के सपने को साकार करने के लिए तकनीकी शिक्षा में इस तरह के प्रयोग कारगर साबित हो सकते हैं। जरूरत है सोच और कार्य प्रणाली में परिवर्तन करने की।

लेखक डॉ. ए.पी.जे. अब्दुल कलाम तकनीकी विवि, उत्तर प्रदेश, लखनऊ के कुलपति हैं।

MV_Jan_2017_Q7:Layout 1 12/14/2016 11:34 AM Page 52

वाइजर अंतरिक्ष यान
(फोटो साभार नासा)

किसी भी राष्ट्र की प्रगति में ज्ञान और विज्ञान की विशिष्ट भूमिका रहती है, इसलिए समाज में वैज्ञानिक मानसिकता के प्रसार की भी आवश्यकता है। श्रीमद्भगवतगीता में भगवानश्रीकृष्ण ने विद्या के दो प्रकारों की व्याख्या की है-अपरा और परा। अपराविद्या अर्थात् वह विद्या जो मनुष्य को प्रकृति के रहस्यों को समझने की सामर्थ्य देती है। इस परंपरा से आज का विज्ञान अपरा विद्या ही कहा जाएगा। भारत में अपरा विद्या के प्रति प्रारंभ से ही मानसिक चेतना बहुत बलवती रही है। यही कारण है कि विदेशी आक्रमणों से पूर्व भारत तकनीकी और औद्योगिक क्षेत्र में विश्व में अग्रणी था, परंतु गुलामी के दौर ने इस परंपरा को छिन्न-विच्छिन्न कर दिया। आजादी के बाद एक बार फिर से विज्ञान और तकनीकी के क्षेत्र में विशेष प्रयास किए गए, जिसके सुपरिणाम सामने आने लगे हैं। इस सबके बवाजूद भारत नवीन तकनीक के मामले में आज भी दुनिया के कई देशों से पीछे है। भारत को एक बार फिर से विज्ञान और तकनीक में श्रेष्ठता प्राप्त करने के लिए समाज में वैज्ञानिक मानसिकता का प्रसार करना होगा।

MV_Jan_2017_Q7:Layout 1 12/14/2016 11:34 AM Page 53

डॉ. ओम प्रभात अग्रवाल

वैज्ञानिक मानसिकता और राष्ट्र

किसी भी राष्ट्र की प्रगति में वैज्ञानिक मानसिकता की विशिष्ट भूमिका रहती है। परमाणु भौतिकी, जीन इंजीनियरी, रॉकेट विज्ञान एवं सूचना प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में विज्ञान की ऊँची छलांग ने एक जबरदस्त उद्वेलन उत्पन्न किया है और विश्व का स्वरूप बदल दिया है। इस संदर्भ में सन् 1958 में अति विख्यात विज्ञान प्रस्ताव को लोकसभा के पटल पर रखे जाने के समय 'विज्ञान को मानव जाति का महान उद्यम' बताया जाना अर्थपूर्ण हो जाता है और नोबॅल पुरस्कार विजेता श्री चंद्रशेखर वेंकट रमण द्वारा बहुत पहले दिया गया यह वक्तव्य कि 'भारत की सभी आर्थिक समस्याओं के हल केवल तीन हैं- विज्ञान, अधिक विज्ञान और अधिक विज्ञान (Science, more Science and still more Science)' अत्यंत प्रासंगिक। स्मरणीय है कि इस देश के मूर्धन्य न्यूक्लीय वैज्ञानिक श्री होमी जहाँगीर भाभा ने भी, जिन्होंने स्वतंत्रता के पश्चात् भारत में विज्ञान की प्रगति की आधारशिला रखी, कहा था कि 'औद्योगिक रूप से अविकसित भारत को विकसित राष्ट्रों की पंक्ति में खड़ा होने के लिए विज्ञान को जीवंत और सक्रिय रूप में अपनाना ही होगा।'

चंद्रशेखर वेंकट रमण

भारत की सभी आर्थिक समस्याओं के हल केवल तीन हैं- विज्ञान, अधिक विज्ञान और अधिक विज्ञान

अब यदि राष्ट्र की प्रगति के लिए विज्ञान इतना महत्त्वपूर्ण है तो स्पष्ट है कि देश में

MV_Jan_2017_Q7:Layout 1 12/14/2016 11:34 AM Page 54

वैज्ञानिक मानसिकता का प्रसार भी आवश्यक है क्योंकि वही तो विज्ञान पंडितों के जन्म के लिए उर्वरा भूमि का कार्य करती है। परंतु यह मानसिकता है क्या- यह समझने के पूर्व स्वयं विज्ञान का किंचित सैद्धांतिक विवेचन आवश्यक है। प्रारंभ श्रीमद्भगवत् गीता से ही किया जा सकता है जिसमें भगवान श्री कृष्ण विद्या के दो रूपों की व्याख्या करते हैं– अपरा और परा। अपरा विद्या अर्थात् वह विद्या जो मनुष्य को प्रकृति के रहस्यों को समझने का सामर्थ्य देती है। इस परिभाषा के अनुसार आज का विज्ञान अपरा विद्या ही कहा जाएगा। परंतु गीता का धरातल तो आध्यात्मिक है। भौतिक धरातल पर विचार करने पर हम देखते हैं कि थॉमस हक्सले ने उसे 'व्यवस्थित सहज बुद्धि' (Organised Common Sense) कहा है। दूसरे शब्दों में विज्ञान का ज्ञान नितांत सहज नहीं, बल्कि तथ्यात्मक प्रमाणों द्वारा व्यवस्थित होना चाहिए। श्री डब्ल्यू.सी. डैम्पियर तो स्पष्ट शब्दों में कहते हैं कि विज्ञान, प्रयोगों से उत्पन्न तार्किक संकल्पनाओं की ऐसी अंतर्संबंधित शृंखला है जो प्राकृतिक घटनाओं एवं उनके पारस्परिक संबंधों की तर्कशील व्याख्या प्रस्तुत करता है।

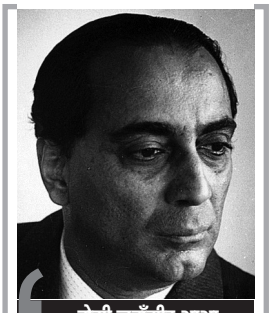

होमी जहाँगीर भाभा

औद्योगिक रूप से अविकसित भारत को विकसित राष्ट्रों की पंक्ति में खड़ा होने के लिए विज्ञान को जीवंत और सक्रिय रूप में अपनाना ही होगा।

श्री डैम्पियर की परिभाषा से ध्वनि निकलती है कि -

MV_Jan_2017_Q7:Layout 1 12/14/2016 11:34 AM Page 55

- विज्ञान प्रयोगाश्रित है,
- प्रयोगाश्रित होने के कारण अध्ययन में प्रेक्षण का महत्त्व है
- विज्ञान के संदर्भ में अंततः तार्किकता का भी महत्त्व है।

किसी भी वैज्ञानिक संकल्पना के आधार स्तंभ यही तीन हैं। यद्यपि उनका इसी क्रम में लगे होना आवश्यक नहीं है। एक-दो उदाहरणों से समझा जा सकता है। स्टीफेन हाकिंग ने कुछ प्रयोगों तथा नक्षत्रीय प्रेक्षणों के आधार पर अंतरिक्ष में श्याम विवर (Black holes) की उपस्थिति की प्रागुक्ति की, जिनमें द्रव्यमान इस सीमा तक एकत्रित रहता है और निरंतर बढ़ता भी जाता है कि प्रवेश करने वाली प्रकाश किरण तक बाहर नहीं आ सकती और फिर एक सीमा से अधिक द्रव्यमान बढ़ जाने पर विस्फोट हो जाने के कारण नए-नए आकाशीय पिंड जन्म लेने लगते हैं। हॉकिंग के अनुसार वर्तमान सृष्टि की रचना ऐसे ही एक श्याम विवर के विस्फोट से हुई। बिलकुल वही 'ऋग्वेद' के हिरण्यगर्भ से सृष्टि की उत्पत्ति वाला सिद्धांत। परंतु श्याम विवर संबंधी इस प्रागुक्ति की पांडित्यपूर्ण तर्क युक्त व्याख्या शेष रही। इसकी त्रुटिहीन गणितीय व्याख्या प्रस्तुत की श्री

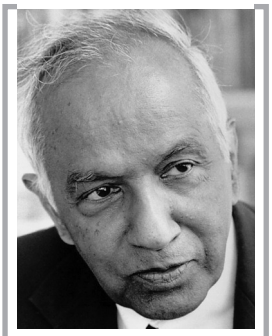

सुब्रमण्यम चंद्रशेखर ने श्याम विवर संबंधी प्रागुक्ति की त्रुटिहीन गणितीय व्याख्या की जिसके बाद ही ब्लैक होल का सिद्धांत पूर्णरूप से स्वीकृत हो सका

MV_Jan_2017_Q7:Layout 1 12/14/2016 11:34 AM Page 56

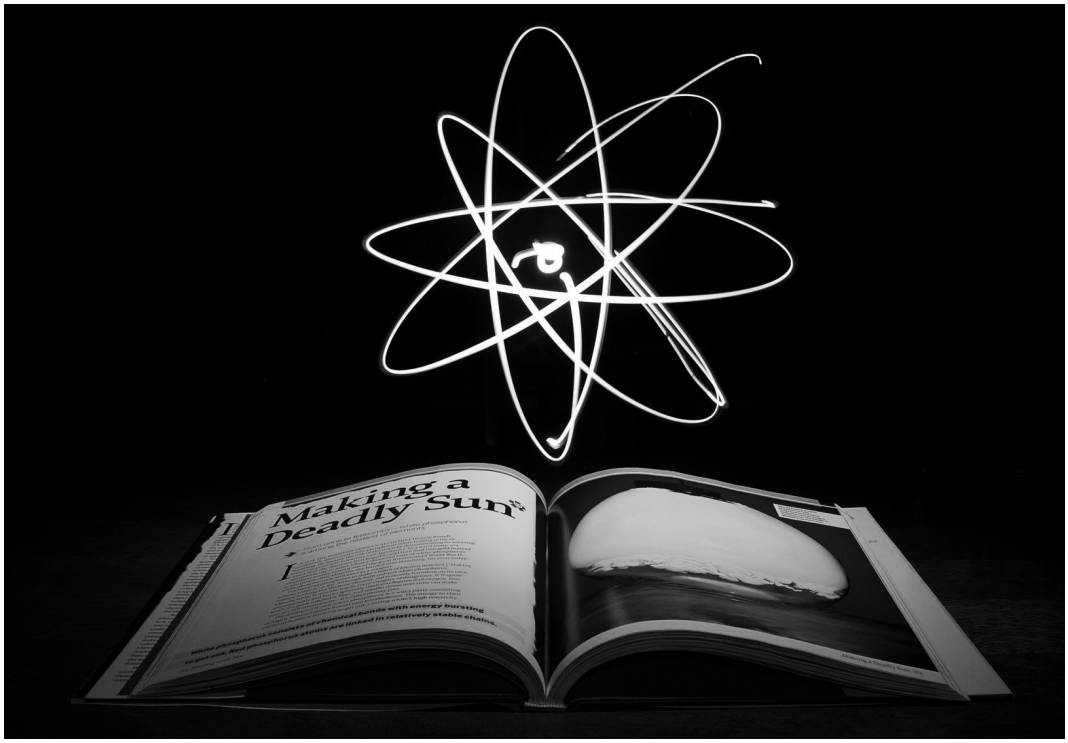

सुब्रमण्यम चंद्रशेखर ने, जिसके बाद ही ब्लैक होल का सिद्धांत पूर्ण रूप से स्वीकृत हो सका। इसके लिए उन्हें नोबॅल पुरस्कार से अलंकृत किया गया और द्रव्यमान की उस अधिकतम सीमा (जिसके बाद विस्फोट ही संभव है) को उन्हें समादृत करने के लिए चंद्रशेखर सीमा कह कर पुकारा गया। इसी प्रकार, आइंस्टाइन ने प्रागुक्ति की कि ऊर्जा के चारों रूप, इलेक्ट्रोमैग्नेटिक बल, दुर्बल एवं सबल न्यूक्लीय बल तथा गुरुत्व बल वस्तुतः एक ही हैं। इसे ऊर्जा का महान एकीकरण सिद्धांत कहा गया यद्यपि प्रयोग और प्रेक्षण शेष रहा। याद करें 'ईषावास्योपनिषद्' का कथन कि विश्व का प्रधान कण एक है– 'आत्मन', जो छोटे से छोटे और बड़े से बड़े सभी में विद्यमान है। यहाँ स्पष्टतः 'आत्मन' को ऊर्जा का ही पर्याय समझा जा सकता है। 1974 में अब्दुस्सलाम (Abdus Salam) एवं सहयोगियों ने इलेक्ट्रोमैग्नेटिक फोर्स एवं दुर्बल न्यूक्लीय बल के एकीकरण में सफलता प्राप्त की और नोबॅल प्राप्त किया। परंतु अभी शेष दो बलों का एकीकरण बाकी है। इसके बाद ही एकीकरण सिद्धांत वास्तविक रूप ले सकेगा।

उपर्युक्त दोनों परिभाषाओं का सम्मिलित निष्कर्ष है कि प्रकृति एवं भौतिक विश्व में चलने वाले क्रियाकलापों से संबंधित प्रयोग आधारित प्रेक्षित तथ्यों का तर्क युक्त व्यवस्थित रूप ही विज्ञान है। अब यदि यह विज्ञान है तो हम कह सकते हैं कि आस-पास की किसी भी घटना अथवा प्रचलित धारणा के तथ्याधारित तार्किक विश्लेषण की सामर्थ्य ही वैज्ञानिक मानसिकता कहलाएगी। उदाहरणार्थ, ऐसी मानसिकता का स्वामी तर्क करेगा कि क्या वास्तव में गड्डी के नोटों की संख्या दुगनी की जा सकती है? संभवतः क्लोनिंग के

MV_Jan_2017_Q7:Layout 1 12/14/2016 11:34 AM Page 57

द्वारा। परंतु क्लोनिंग तो केवल जीवित वस्तुओं की संभव है। बछड़े का क्लोन संभव है और किसी वनस्पति का भी। परंतु नोट तो निर्जीव हैं। अतः उनकी क्लोनिंग कैसे? अतः यह सोचना भ्रामक है कि गड्डी के नोटों की संख्या अथवा स्वर्णाभूषणों की संख्या कोई दुगनी कर सकता है। इसी प्रकार यह कहना कि यज्ञों में प्राणवायु ऑक्सीजन की उत्पत्ति होती है, वैज्ञानिक मानसिकता से रहित व्यक्ति की ही सोच हो सकती है। वैज्ञानिक मानसिकता वाला व्यक्ति तो यही तर्क करेगा कि हवि के अपूर्ण दहन से कतिपय सुगंधवाही (और संभवतः स्वास्थ्य के लिए लाभप्रद भी) कार्बनिक यौगिकों का वाष्प तो निकल सकता है, परंतु पूर्ण दहन के फलस्वरूप तो ग्लोबल वार्मिंग में सहायक गैस कार्बन डाइआक्साइड ही उत्पन्न होगी।

इस वैज्ञानिक मानसिकता और विज्ञान के किंचित व्यावहारिक रूप की मित्रता अंततः वैज्ञानिक चेतना में परिवर्तित हो जाती है जिससे न केवल एक प्रगतिशील, प्रबुद्ध राष्ट्र का निर्माण संभव हो पाता है, बल्कि जो दीर्घ अवधि में उसकी संस्कृति को भी वैज्ञानिक आधार प्रदान कर सकती है। स्मरणीय है कि भारत में विज्ञान का इतिहास कम से कम छह हजार वर्ष पुराना है और इसीलिए उसकी अनेकानेक सांस्कृतिक और धार्मिक मान्यताएँ पूरी तरह विज्ञान आधारित हैं। यद्यपि यह एक स्वतंत्र लेख का विषय है।

यहाँ एक चेतावनी भी आवश्यक है। राष्ट्र और समाज में यदि वैज्ञानिक चेतना न हो तो वैज्ञानिक प्रगति कुंठित ही रहेगी और यदा-कदा तो नुकसानदेह भी सिद्ध हो सकती है। यदि किसान में यह चेतना नहीं है तो कीटनाशकों का निर्बाध प्रयोग सभी के स्वास्थ्य के लिए गंभीर समस्या ही उत्पन्न करेगा।

अंतिम प्रश्न हो सकता है कि वैज्ञानिक मानसिकता का प्रसार हो कैसे? स्पष्टतः विज्ञान के कतिपय सरलतम मूलभूत सिद्धांतों, व्यावहारिक रूप और घटनाओं के अध्ययन और मनन की परंपरा का निरंतर संवर्धन ही वैज्ञानिक मानसिकता के प्रसार में सहायक हो सकता है। इस दृष्टि से प्रारंभिक स्तर पर उचित पाठ्यक्रम, विज्ञान मेले, विद्यालयों में प्रासंगिक बातों पर वाद-विवाद, सामान्य जन में लोकरुचि विज्ञान पत्रिकाओं का प्रचार आदि इसके प्रसार की क्रियाविधि का निर्माण करते हैं और सरकारों द्वारा उनका उत्साहप्रद समर्थन अनिवार्य हो जाता है। द्रष्टव्य है कि वैज्ञानिक मानसिकता से रहित राष्ट्र की तुलना आज के संदर्भों में केवल चेतनाविहीन मानव से ही की जा सकती है।

वैज्ञानिक मानसिकता और विज्ञान के किंचित व्यावहारिक रूप की मित्रता अंततः वैज्ञानिक चेतना में परिवर्तित हो जाती है जिससे न केवल एक प्रगतिशील, प्रबुद्ध राष्ट्र का निर्माण संभव हो पाता है, बल्कि जो दीर्घ अवधि में उसकी संस्कृति को भी वैज्ञानिक आधार प्रदान कर सकती है। स्मरणीय है कि भारत में विज्ञान का इतिहास कम से कम छह हजार वर्ष पुराना है और इसीलिए उसकी अनेकानेक सांस्कृतिक और धार्मिक मान्यताएँ पूरी तरह विज्ञान आधारित हैं

लेखक महर्षि दयानंद विश्वविद्यालय, रोहतक के रसायन विभाग के पूर्व अध्यक्ष एवं इंडियन साइंस कांग्रेस के रसायन खंड के पूर्व अध्यक्ष एवं केंद्रीय हिंदी समिति (भारत सरकार) के पूर्व सदस्य हैं।

MV_Jan_2017_Q7:Layout 1 12/14/2016 11:34 AM Page 58

मोटापा एक गंभीर रोग है। चिकित्सकों व स्वास्थ्य विशेषज्ञों के लिए यह एक विश्वव्यापी समस्या बन गया है, क्योंकि अब बच्चे और किशोर भी इसकी चपेट में आने लगे हैं। विशेषज्ञों का मानना है कि आजकल मोटापा बढ़ने के मुख्य कारण हैं खानपान में अनियमितता व फास्ट फूड, शहरों विशेषकर महानगरों में भागदौड़भरी व्यस्त जिंदगी और बदलती जीवन शैली के कारण शारीरिक श्रम का कम होना तथा व्यायाम से जी चुराना। बढ़ते मोटापा के कारण कुछ जागरूक लोग जहाँ व्यायाम करने लगे हैं वहीं कुछ लोग मोटापा घटाने के लिए शल्य चिकित्सा (सर्जरी) का भी सहारा लेते हैं परंतु इसके खतरे भी कम नहीं। आयुर्वेद में मोटापा को एक गंभीर रोग माना गया है तथा इसके उपचार के लिए जहाँ संतुलित भोजन व व्यायाम पर जोर दिया गया है वहीं स्थानीय रूप से उपलब्ध कई औषधियों का अपयोग करने का भी परामर्श दिया गया है। मोटापा की रोकथाम के लिए यहाँ प्रस्तुत है प्रसिद्ध आयुर्वेद चिकित्सक डॉ. ज्योत्स्ना के उपयोगी सुझाव-

MV_Jan_2017_Q7:Layout 1 12/14/2016 11:34 AM Page 59

डॉ. ज्योत्स्ना

जान का जंजाल मोटापा

आजकल मेदोरोग (मेदिस्विता, मोटापा) समाज में बहुत बड़ी समस्या बन कर उभर रहा है। अमेरिकी लोगों के समान ही भारत भी तेजी से इससे ग्रस्त हो रहा है। लाइफ स्टाइल डिजीज यानी जीवन चर्या से संबंधित रोगों में यह एक प्रमुख समस्या है। आयुर्वेद में भी अतिस्थूल व्यक्ति को निंदनीय कहा गया है। मोटापा की वर्तमान समस्या का एक बड़ा कारण सुख-सुविधापूर्ण जीवन के नाम पर शारीरिक परिश्रम में कमी और फास्ट फूड का अंधाधुंध प्रचलन है। यही नहीं शहरों में तो विकास का बड़ा ही विकृत रूप सामने आया है, जहाँ बच्चों के लिए भागने-दौड़ने और खेलने-कूदने की जगहें लुप्त हो गई हैं। असुरक्षा और शिक्षा पद्धति में आए बदलाव की वजह से स्कूली पढ़ाई-लिखाई के दबाव के कारण भी बच्चों को खेलने का समय ही नहीं मिल पाता। समस्या केवल बच्चों के लिए ही नहीं बड़ों के लिए भी है, भीड़ भरी सड़कों पर पैदल चलने की जगह ही नहीं बची। शहरों विशेषकर महानगरों में काम के समय और घर से काम के स्थान पर आने-जाने में ही बहुत समय चला जाता है, जिससे व्यायाम कर पाने की संभावनाएँ क्षीण होती जा रही हैं। शहरों में जिम जिस तेजी से खुल रहे हैं लेकिन सभी के लिए उनका खर्च वहन करना संभव नहीं है।

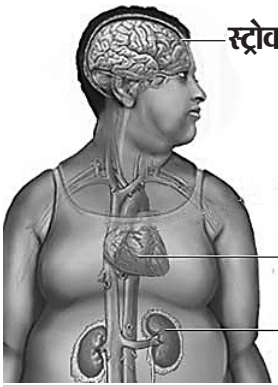

मोटापे और वजन बढ़ने से उच्चरक्तचाप तथा कई अन्य समस्याएं पैदा होती हैं।

मोटापा अपने साथ अन्य बहुत से जानलेवा या कष्टसाध्य रोगों को लाता है, इनमें प्रमुख हैं मधुमेह (डायबिटिज), स्ट्रोक, हृदय के रोग, जोडों के रोग (अर्थराइटिस) व कई प्रकार के कैंसर आदि।

MV_Jan_2017_Q7:Layout 1 12/14/2016 11:34 AM Page 60

रोग के कारण - सामान्यतः अत्यधिक भोजन व अतिगरिष्ठ भोजन तथा व्यायाम की कमी इसके प्रमुख कारण हैं। आवश्यकता से अधिक कैलोरी का लेना और कम उपयोग करना भी मोटापा का एक कारण है, ऐसा तब होता है जब कैलोरी (ऊर्जा) के ग्रहण करने और उसके उपयोग में असमानता होती है। इनके अतिरिक्त आनुवांशिकीय (जनेटिक), चय-अपचय (मैटाबोलिक), पारिस्थितिकी, खान-पान की शैली तथा परिश्रम न करने जैसे स्वभावजन्य कारणों की वजह से भी मोटापा रोग हो जाता है।

➔ **आनुवांशिकीय-** आम तौर पर यह देखा जाता है कि बच्चे माता-पिता की खान-पान की आदतें अपनाते हैं, यदि माता-पिता अधिक तला खाना खाते हैं और बैठे रहते हैं तो ज्यादातर बच्चे भी वैसा ही करते हैं, किंतु सिर्फ इतना ही नही है व्यक्ति की कोशिकाओं में विद्यमान गुणसूत्र (जींस) भी यह तय करने के लिए जिम्मेदार हैं कि किसी व्यक्ति के शरीर के किस भाग में कहाँ वसा ज्यादा एकत्रित होगी।

रोग जिनके कारण मोटापा बढ़ता है-

➔ हारमोन के असंतुलन से शरीर में चर्बी जमा होने लगती है जैसे-

- लगभग 50 वर्ष की आयु के बाद स्त्रियों में मासिक का बंद होना।
- शरीर में थायरॉयड हारमोन की कमी का होना।
- अधिवृक्क (एडरीनल ग्रंथी) में कोर्टिसोल

वृक्षामला (कोकुम) Garcinia indica

अम्लवेटस

कोकुम कोंकण में विशेष रूप से पाया जाता है। आयुर्वेद में इसे अम्लवेटस कहते हैं तथा इसका वानस्पतिक नाम Garcinia indica है। इसके फलों का प्रयोग होता है। फल गोल व पकने पर जामुनी लाल रंग के होते हैं। फल में 5-6 बड़े-बड़े बीज होते हैं। इसके फलों को काट कर सुखा लिया जाता है, तब प्रयोग में लेते हैं। बीजों का तेल रखने पर जम जाता है। इसे कोकम का घी या कोकुम बटर नाम से जाना जाता है और औषधि के रूप में प्रयोग किया जाता है। आजकल बहुत सी दवाई कंपनियाँ कोकुम के विभिन्न उत्पादों को मोटापा कम करने की औषधियों के रूप में महंगे दामों पर बेच रही हैं। कोकुम स्वाद में मधुर व अम्ल रस युक्त होता है। भोजन में खटाई के लिए इसका प्रयोग आम है। इसका प्रयोज्य अंग फल है। यह हृदय के लिए हितकर तथा हृदय रोगों में काम आता है। इसके अलावा पाचन संस्थान संबंधी रोग, जैसे- अरुचि (भोजन में रुचि ना होना), अग्निमांद्य (पाचन ठीक ना होना), विबंध, (कब्ज), गुल्म (अफारा), प्लीहा के बढ़ने में इसका प्रयोग होता है।

MV_Jan_2017_Q7:Layout 1 12/14/2016 11:34 AM Page 61

हारमोन का अधिक स्राव।

- लड़कियों में ओवरी में सिस्ट का बनना।

➔ औषधियाँ के प्रयोग के कारण मोटापा

कई दवाइयों के अति प्रयोग से शरीर में वसा का संचय होने लगता है, क्योंकि इन दवाइयों से चयापचय क्रिया असंतुलित होने लगती है। कैलोरी का जलना धीमा हो जाता है, भूख बढ़ जाती है। शरीर में जल का संचय अधिक होने लगता है, ये दवाइयाँ हैं जैसे- कोर्टिसोन व अवसाद (डिप्रेशन) की दवाइयाँ।

➔ मानसिक तनाव : कुछ लोग मानसिक तनाव, गुस्से में या मन न लगने की स्थिति में ज्यादा खाते हैं, इससे उनमें मोटापा बढ़ता है।

➔ धूम्रपान – व्यक्ति जब धूम्रपान छोड़ता है तब उसे सावधानी रखनी चाहिए, क्योंकि भोजन का स्वाद बढ़ जाने से ज्यादा खाने की आदत बन जाती है।

➔ आयु – आयु बढ़ने के साथ मांसपेशियाँ कमजोर हो जाती हैं, कार्यक्षमता घटती है और व्यायाम कम होता है जिससे वजन बढ़ता है। स्त्रियों में विशेष रूप से मासिक बंद होने के बाद वजन बढ़ने लगता है।

➔ नींद की कमी – नींद भूख और संतुष्टि का अहसास कराने वाले हॉरमोन को संतुलित करती है। नीद की कमी से यह असंतुलित हो जाता है, अतः वसा जमा होने लगती है, जिससे मोटापा बढ़ता है।

रोग के लक्षण

वजन का बढ़ना, कमर पेट आदि पर वसा का जमा

वृक्षामला की प्रयोग विधि

1. हृदय दौर्बल्य, मूत्रकृच्छ, मूत्र होने में कठिनाई, अश्मरी (पथरी) में इसका स्वरस उपयोगी है। 5-10 मिली मिली फल का रस दिन में दो-तीन बार दें या सूंघे। फल को भिगोकर उसका रस प्रयोग करें।
2. तृष्णा (अत्यधिक प्यास) में कोकुम और दाडिम (अनार) का रस कुछ देर मुँह में भरकर रोकें और धीरे-धीरे पीएँ।
3. गुल्म-ताजा कोकुम रस में नमक मिलाकर लें।
4. पित्त वृद्धि में फल का शरबत लें।
5. तेल (कोकुम बटर) घाव भरने का काम करता है। पैर फटने पर इसका प्रयोग उत्तम है।
6. अतिसार, रक्तातिसार, संग्रहणी में इसका सूखा फल भिगो कर छानकर बार-बार थोड़ा-थोड़ा पीएँ।
7. अपच होने पर कोकुम में थोड़ा अदरक व नमक मिलाकर प्रयोग करें।
8. एलर्जी होने पर इसके सेवन से विषक्तता कम होने से एलर्जी को कम करता है।
9. त्वचा के रोगों में- कोकुम रस पीने के लिए दें तथा त्वचा पर लगाने से, इसका रस एंटीएलर्जिक है और सूजन कम करता है। इसका घी घाव भरने के लिए लगाया जाता है।
10. लू लगने में- इसका रस लू लगने से बचाता है व लू लग जाने पर पीते रहने से ठंढ़क देता है।
11. यह एंटी-ऑक्सीडेंट हैं। विषाक्त तत्त्वों को शरीर से निकालता है।
12. अर्श (बवासीर) के मस्सों पर इसका घी लगाने पर ठंड़क लगती है।
13. यह विशेष रूप से भूख को नियंत्रित करता है। इसलिए कोकुम अधिक खाने वालों की भूख कम करता है।
14. यह कैंसररोधी है और कई प्रकार के कैंसर को रोकता है।

MV_Jan_2017_Q7:Layout 1 12/14/2016 11:34 AM Page 62

होना, कपड़े कस जाना, बॉडी मास इंडेक्स का बढ़ना।

आयुर्वेद में मेदा रोग के वर्णन में कहा गया है कि व्यायाम न करने, दिन मे सोने, अधिक बैठे रहने से कफ की अधिकता होती है। अत्यधिक भोजन करने और मधुर रस का अधिक सेवन करने से मेदा रोग होता है। कफ के अधिक बढ़ने से शरीर की वाहनियाँ अवरुद्ध हो जाती हैं व सभी धातुओं की पुष्टि नहीं होती है, इससे शरीर का उचित पोषण नहीं होता है। उदर (पेट), वक्ष व कमर में वसा जमा हो जाती है। इससे प्रमेह ज्वर, भगंदर और वात रोग हो जाते हैं।

मोटापा से बचने के उपाय

स्वास्थ्यकर भोजन व उपयुक्त दिनचर्या, रात्रिचर्या व ऋतुचर्या (ऋतु के अनुसार भोजन व आचरण)। उचित व्यायाम- व्यायाम का आयुर्वेद में अर्थ है शरीर की क्षमतानुसार इतना व्यायाम जिससे थकान महसूस हो।

मोटापा का उपचार

- एक चम्मच मेथीदाना व धनिया पानी से सुबह शाम लें।
- यदि कब्ज रहती है तो त्रिफला चूर्ण 5 ग्राम ईसबगोल मिलाकर लें।
- गिलोय और त्रिफला का काढ़ा बनाकर लें।
- त्रिफला चूर्ण में सम भाग विडंग व त्रिकटु चूर्ण मिला कर लें।
- चिरायते का काढ़ा रोज लें।
- जीरे को उबालकर पानी पीएँ।
- मेथी, अजवायन व काली जीरी का चूर्ण बनाकर दिन में दो बार एक-एक चम्मच लें।
- भोजन में जौ के आटे का प्रयोग करें व जौ का सत्तू बिना चीनी मिलाए लें।
- जौ के सत्तू में त्रिफला चूर्ण, त्रिकटु चूर्ण और थोड़ा-सा तिल का तेल मिलाकर पीएँ।
- सुबह गर्म जल में नींबू व शहद मिलाकर लें।
- खाली पेट गर्म पानी लें। वैसे भी पीने में गुनगुने पानी का प्रयोग करें।
- भोजन में कच्चे देशी टमाटर का सलाद लें।
- अदरक, शहद व काली मिर्च का प्रयोग करें।
- कोकुम का भोजन में प्रयोग करें। यह वसा के जमा होने को नियंत्रित करता है व भूख कम करता है।
- पुदीने की सूखी पत्ती को एक चम्मच शहद व एक चुटकी काली मिर्च मिलाकर गर्म पानी से लें।
- भोजन में करी पत्ते का प्रयोग बढ़ाएँ।
- दालचीनी के चूर्ण को पानी में उबाल कर पीएँ।
- भोजन में लहसुन का प्रयोग बढ़ाएँ। लहसुन व मिर्च की चटनी बना सकते हैं।

आयुर्वेद में मेदो रोग के वर्णन में कहा गया है कि व्यायाम न करने, दिन मे सोने, अधिक बैठे रहने से कफ की अधिकता होती है। अत्यधिक भोजन करने और मधुर रस का अधिक सेवन करने से मेदा रोग होता है। कफ के अधिक बढ़ने से शरीर की वाहनियाँ अवरुद्ध हो जाती हैं व सभी धातुओं की पुष्टि नहीं होती है, इससे शरीर का उचित पोषण नहीं होता है। उदर (पेट), वक्ष व कमर में वसा जमा हो जाती है। इससे प्रमेह ज्वर, भगंदर और वात रोग हो जाते हैं।

लेखिका अलीगढ़ यूनानी एवं आयुर्वेदिक कॉलेज, अलीगढ़ में प्रोफेसर हैं।

MV_Jan_2017_Q7:Layout 1 12/14/2016 11:34 AM Page 63

मनोगत

मान्यवर महोदय,

आपके स्नेह और सहयोग के बल पर 'मंगल विमर्श' अपने दो वर्ष सफलतापूर्वक पूर्ण कर तीसरे वर्ष में प्रवेश कर रहा है। दो वर्ष की यह यात्रा आपके द्वारा समय-समय पर किए गए उत्साहवर्धन और मार्गदर्शन से ही संभव हो पाई है, आशा ही नहीं बल्कि पूर्ण विश्वास है कि भविष्य में भी आपका सक्रिय सहयोग इसी प्रकार मिलता रहेगा। तीसरे वर्ष का जनवरी अंक आपको सौंपते हुए प्रसन्नता और संतोष का अनुभव हो रहा है।

सुधी पाठकों के पत्र हमारे लिए बहुत बड़ा संबल और मार्गदर्शक होते हैं। श्री रजत सिंघल ने अपने पत्र में जुलाई 2016 अंक के मनोगत के अंतर्गत 'सामाजिक समरसता' और 'कैसे बढ़े सामाजिक समरसता' संगोष्ठियों में व्यक्त विचारों के क्रम में इन विषयों पर अपने विचारों को व्यक्त करते हुए लिखा है कि धरा पर रहने वाली विभिन्न जातियाँ, उपजातियाँ, मत-मतांतर यह दो अलग-अलग विषय हैं। जातियाँ-उपजातियाँ ये मानव निर्मित हैं या प्राकृतिक और ऐसे ही मत, मतांतर ये मानव निर्मित हैं या प्राकृतिक पहले हमें इसको स्पष्ट करना होगा।

मत-मतांतर, पूजा पद्धति, संप्रदाय आदि चाहे नवीन हों या फिर चाहे पुरातन ध्यान में आता है कभी न कभी इनका आरंभ किसी मानव द्वारा ही किया गया है, फिर वह चाहे अति प्राचीन वैदिक मत हो, सनातन मत हो शैव, जैन या नवीन इसाईयत या इस्लाम हो इसी कारण इनका आविर्भाव व पराभव होता रहता है। धरा पर पाई जाने वाली विभिन्न जातियों व उपजातियों के विषय में कुछ विद्वानों का मत है कि मनु महाराज ने समाज को जातियों में वर्गीकृत किया। कुछ का मानना है कि पुराण पुरुषों ने कर्म के आधार पर जातियाँ बनाई जो बाद में जन्म से मान ली गई आदि-आदि।

जब हम धरा पर प्रकृति की रचना का ध्यान करते हैं तो पाते हैं कि यहाँ पर अन्न कण से लेकर मानव तक जो भी सृष्टि का निर्माण हुआ है चाहे वह वनस्पति हो, जलचर, नभचर, थलचर हो, या स्वदेज, अण्डज हो या उद्भिज सभी विभिन्न गुणसूत्रों के आधार पर अलग-अलग वर्ग में और वर्ग के अंतर्गत भी अलग-अलग जातियों, उपजातियों में विभाजित हैं। प्रत्येक जाति की अपनी विशिष्टता व अपने कार्य विशेष में विशेष क्षमता होती है, जिसके जीवन में उचित नियोजन से समाज में जीवनतंता रहती है तथा मानव जीवन अपने उत्कृष्ट पर रहकर धर्म, अर्थ, काम आरैर मोक्ष चारों पुरुषार्थ सहज

MV_Jan_2017_Q7:Layout 1 12/14/2016 11:34 AM Page 64

सुलभ होते हैं।

सामाजिक, धार्मिक और वैयक्तिक उत्सवों में सर्वसमाज की सहभागिता होती थी, आनंद के प्रसंग जैसे जन्मोत्सव, विवाह आदि व गम के प्रसंग जैसे मृत्यु आदि पर भी सभी जातियों की न केवल सहभागिता रहती थी बल्कि रचना इस तरह की थी कि उसके बिना कार्य सम्पन्न होने में कठिनाई आती थी। जाति के कारण समाज में कोई ऊँचा- नीचा नहीं था, ना ही समाज में कोई विभेद था और जातियों में आपसी सौहार्द व तालमेल था व समाज में ये एक दूसरे की पूरक थी।

इस्लामिक आक्रमणों के कालखंड से पहले तक भारतीय समाज में विभिन्न जातियाँ, पंथ, संप्रदाय, सौहार्द, साहचर्य व प्रेम पूर्वक जीवन यापन करते थे। राजसत्ताओं में आपसी संघर्ष होता रहता था लेकिन उसका समाज जीवन पर कोई असर नहीं था, मुस्लिम आक्रांताओं के समय में भी जातियों ने अपने दायरे कठोर कर लिए कुछ समरसता भाव में कमी आई कुछ ऊँच-नीच की भावना भी पनपी लेकिन जाति वैमनस्य समाज में स्थान नहीं पा सका।

अंग्रेजी शासन के दौरान अंग्रेजों की 'फूट डालो राज करो' की नीति ने जातियों, मत, संप्रदाय में अलगाव व वैमनस्य को प्रेरित किया और समाज का ताना-बाना बिखरने लगा।

अंग्रेजों के शासन की समाप्ति के बाद इस को दुरुस्त किया जा सकता था लेकिन राजनीतिक स्वार्थों ने इसको और हवा दी। वोट की राजनीति के कारण विभिन्न राजनेता व राजनीतिक दल जिस प्रकार सामाजिक समरसता को तार-तार कर रहे हैं वह बहुत ही भयावह स्थिति है और लगता है कि विदेशी इशारों पर चलने वाला नासमझ मीडिया इसको हवा देकर समाज को तोड़ने पर आमादा है। अशिक्षा, कुशिक्षा व गरीबी के कारण लोग इसके फंदे में फंसते जा रहे हैं। ऐसे में देश को अस्थिर करने वाली शक्तियाँ आज सफल होती प्रतीत होती हैं।

इस गंभीर समस्या के समाधान की दृष्टि से विभिन्न सामाजिक, धार्मिक संस्थाओं व संत-महात्माओं और अन्य प्रबुद्धजनों द्वारा जो प्रयास किए जा रहे हैं उनको और अधिक शक्ति लगाकर करने की आवश्यकता है। इस दृष्टि से यदि इन चार बिंदुओं–

1. शिक्षा व्यवस्था में आमूलचूल परिवर्तन।
2. आरक्षण जातिगत न होकर आर्थिक आधार पर हो।
3. धार्मिक व सामाजिक संस्थाएँ अपने छोटे-छोटे दायरे से निकलकर हम सब भारत माँ की संतान सभी सहोदर भाई इस भाव को जागृत करते हुए, मानवीय गुणों का विकास हो ऐसा प्रबोधन समाज में करें।
4. शासन आर्थिक विषमता कम करने के उपाय करे तो इस दिशा में सराहनीय व आमूल-चूल बदलाव लाकर समाज में समरसता, साहचर्य, सौहार्द व एकीकरण के भाव का निर्माण होगा।

स्नेहाकांक्षी
आदर्श गुप्ता
प्रबंध संपादक

MV_Jan_2017_Q7:Layout 1 12/14/2016 11:34 AM Page 65

सहयोगी वृंद

1. श्री शाश्वत अग्रवाल
215, दिल्ली चैंबर्स, दिल्ली गेट
दिल्ली- 110001

2. श्री निर्भरान्त अग्रवाल
जी-12, आनंद निकेतन
दिल्ली- 110021

3. स्निग्ध अग्रवाल
ए-11 ए, अंसल विला, सतबरी
दिल्ली-110074

4. श्री आशीष अग्रवाल
98, रतनलाल नगर, कानपुर,
उत्तर प्रदेश-208022

5. श्री गोपाल गुप्ता
गोपाल इंडस्ट्रीज 339,
पटपड़गंज इंडस्ट्रीयल एरिया, दिल्ली-110092

6. श्री विकास मंगला
337, सैक्टर-14,
सोनीपत-131001, हरियाणा

7. श्री रमेश कुमार गुप्ता
पी.एम.पब्लिकेशंस 10-बी, नेताजी सुभाष मार्ग,
दरियागंज, दिल्ली-110002

8. श्री सुशील गोयल
सी-67, अहिंसा विहार, सेक्टर-9, रोहिणी
दिल्ली-110085

9. डॉ. राजवीर मित्तल
1611, नीलकंठ अपार्टमेंट, सेक्टर-13
रोहिणी, दिल्ली-110085

10. श्री प्रवीण कुमार गोयल
बी-88, फर्स्ट फ्लोर, सेक्टर-52
नोएडा, उत्तर प्रदेश-201301

11. श्री लोकेश गर्ग
1472, नीलकंठ अपार्टमेंट, सेक्टर-13
रोहिणी, दिल्ली-110085

12. श्री लोकेन्द्र पाल
1-3/39, प्रथम तल, सेक्टर-16,
रोहिणी, दिल्ली-110085

13. प्रो. जोगेन्द्र सिंह राणा
के यू-95, पीतमपुरा,
दिल्ली-110034

MV_Jan_2017_Q7:Layout 1 12/14/2016 11:35 AM Page 66

मंगल विमर्श

सदस्यता -प्रपत्र

मंगल विमर्श **त्रैमासिक पत्रिका**

मुख्य संरक्षक
डॉ. बजरंगलाल गुप्ता

प्रधान संपादक
ओमीश परुथी

संयुक्त संपादक
डॉ. रवींद्र अग्रवाल

प्रबंध संपादक
आदर्श गुप्ता

सदस्यता -शुल्क

10 वर्षों के लिए

₹2000 मात्र

पत्रिका सदस्यता शुल्क हेतु
मंगल सृष्टि (Mangal Srushti)
के नाम चैक/ड्राफ्ट सी-84, अहिंसा विहार,
सेक्टर-9, रोहिणी, दिल्ली- 110085 पर भेजें।
फोन नं. +91-9811166215,
+91-11-27565018

मंगल विमर्श की..... वर्षों की सदस्यता हेतु.....

रुपये का ड्राफ्ट/चैक क्रं. ..... दिनांक.....

बैंक..... भेज रहे हैं,

कृपया..... वार्षिक सदस्य बनाने का कष्ट करें।

नाम.....

पता.....

.....

..... पिनकोड .....

फोन :..... मोबाइल:.....

इ-मेल.....

इ-मेल mangalvimarsh@gmail.com **वेब साइट** www.mangalvimarsh.in